योगविद्या

वर्ष 10 अंक 12
दिसम्बर 2021
सदस्यता डाकखर्च – रु100

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरि: ॐ

योगविद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है। देर से सदस्यता ग्रहण करने पर भी उस वर्ष के जनवरी से दिसम्बर तक के सभी अंक भेजे जाते हैं।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद, 121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2021

पत्रिका की सदस्यता एक वर्ष के लिए पंजीकृत की जाती है। कृपया अपने आवेदन अथवा अन्य पत्राचार निम्नलिखित पते पर करें –

बिहार योग विद्यालय
गंगा दर्शन,
फोर्ट, मुंगेर, 811201
बिहार

✉ अन्य किसी जानकारी हेतु स्वयं का पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।

कुल पृष्ठ संख्या : 56 *(कवर पृष्ठों सहित)*

कवर एवं अन्दर के रंगीन फोटो : श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

आध्यात्मिक मार्गदर्शन

सच्चा आनन्द

पशु-पक्षियों और अन्य छोटे-बड़े जीवों को भोजन अर्पित करना भूतयज्ञ है। अतिथियों का सेवा-सत्कार और पीड़ितों की किसी भी रूप में सेवा, जैसे भूखों को भोजन कराना, दरिद्रों को कपड़े देना, बेघरों को आश्रय देना तथा दुखियों को सांत्वना देना, ये सब मनुष्ययज्ञ के रूप हैं। ऐसे कार्यों को प्रतिदिन करने से हमारे हृदय से घृणा और द्वेष का पूर्णतया निर्मूलन होता है। उनके स्थान पर दया और करुणा का विकास होता है जो हमारे हृदय को कोमल बनाकर उसमें दिव्य प्रेम विकसित करते हैं। हम यह जान जाते हैं कि दूसरों को सुख देकर ही हम स्वयं सुखी हो सकते हैं, दूसरों की सेवा-सहायता करके, दूसरों के दु:खों का निवारण करके तथा जो कुछ भी अपना है उसे दूसरों के साथ बाँट करके ही हम सच्चा आनन्द प्राप्त कर सकते हैं।

– श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर–811201, बिहार के लिए स्वामी शिवध्यानम् सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित
मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथुरा रोड, फरीदाबाद–121007, हरियाणा
स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय **सम्पादक** – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योगविद्या

वर्ष 10 अंक 12 दिसम्बर 2021
(प्रकाशन का 59 वाँ वर्ष)

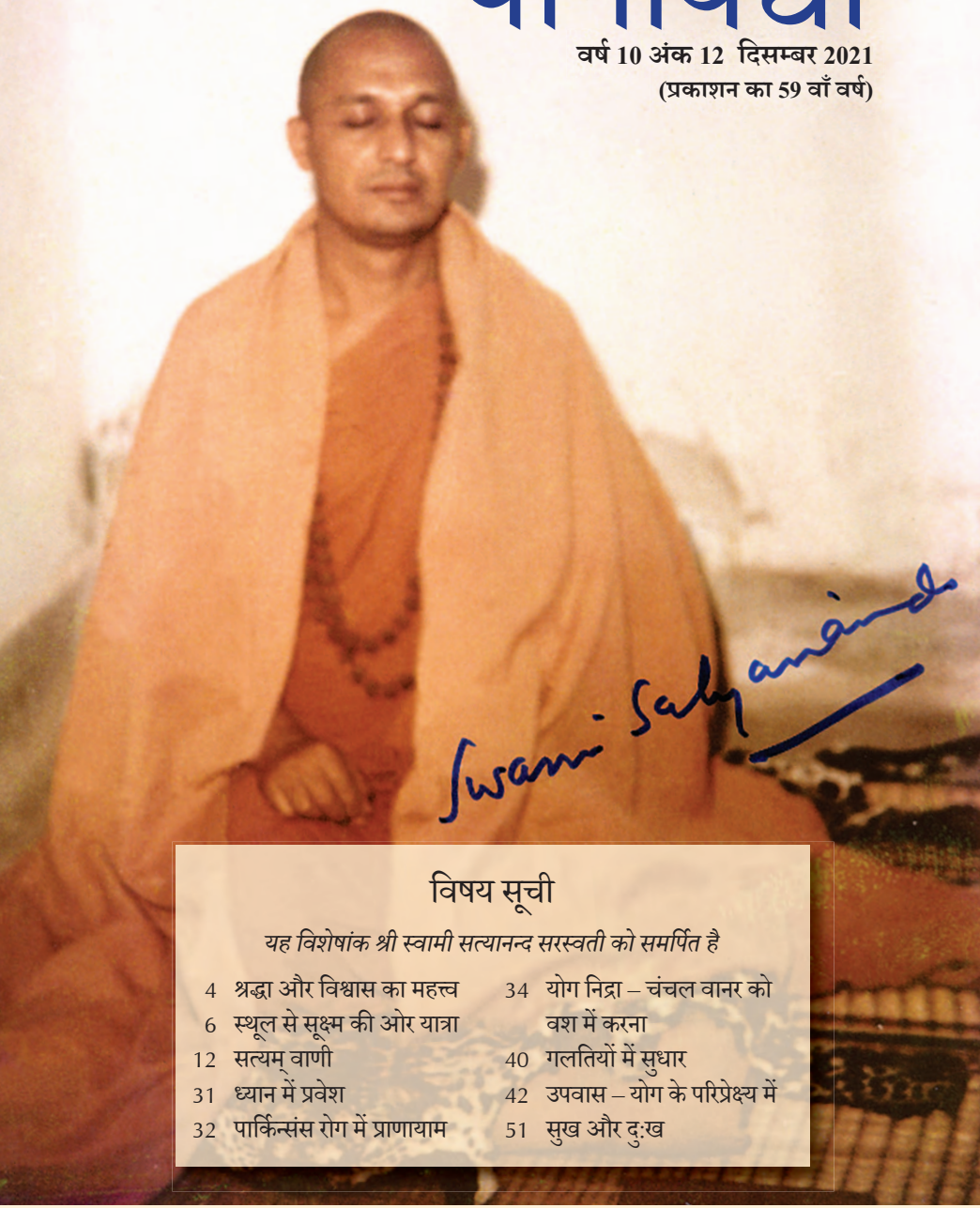

विषय सूची

यह विशेषांक श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती को समर्पित है

4 श्रद्धा और विश्वास का महत्त्व
6 स्थूल से सूक्ष्म की ओर यात्रा
12 सत्यम् वाणी
31 ध्यान में प्रवेश
32 पार्किन्संस रोग में प्राणायाम
34 योग निद्रा – चंचल वानर को वश में करना
40 गलतियों में सुधार
42 उपवास – योग के परिप्रेक्ष्य में
51 सुख और दुःख

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

श्रद्धा और विश्वास का महत्त्व

भगवान का कोई भी स्वरूप हो, उसका महत्त्व होता है श्रद्धा और विश्वास से। अगर श्रद्धा-विश्वास नहीं है तो शिवलिंग भी केवल पत्थर है। श्रद्धा-विश्वास के बिना उसका कोई महत्त्व नहीं है। श्रद्धा हर व्यक्ति के अन्दर तब तक होती है जब तक कि उसका हृदय बच्चे की तरह पवित्र होता है, निष्कपट रहता है, झूठ नहीं बोल सकता, बातें छुपा नहीं सकता, जो भी मुँह में आया, बोल दिया। बच्चे कहते हैं न, 'पिताजी कह रहे हैं कि पिताजी घर में नहीं हैं!' इसको कहते हैं, बच्चे की तरह मासूम होना। बच्चे की तरह जो निष्कपटता है, वही श्रद्धा है। और यह जो बुद्धि है, बुद्धि माने खोपड़ी, यह खोपड़ी भगवान के बारे में सोच सकती है, भगवान के बारे में लिख सकती है, मगर यह खोपड़ी भगवान के बारे में जानती नहीं है।

भगवान का खोपड़ी के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है, यह सब महात्माओं ने कहा है। अगर तुमको भगवान का कुछ भी अनुभव करना हो, तो खोपड़ी को कमरे में बन्द करके आना। खोपड़ी का मतलब विचार। क्यों, क्या, अच्छा-खराब, यह सब खोपड़ी का विषय है। यह जो हम बोल रहे हैं, यह खोपड़ी है। यह बुद्धि का विषय है। इससे भगवान नहीं मिलते। भगवान को प्राप्त करने के लिए, भगवान का दर्शन करने के लिए, उनके आशीर्वाद पाने के लिए छोटे बच्चे की तरह सरल होना चाहिए। यह नहीं सोचना कि मैं पापी हूँ, मैं यह हूँ, मैं वह हूँ। मनुष्य चाहे सदाचारी हो या दुराचारी, पापी हो या पुण्यात्मा, उससे कोई मतलब नहीं है। भगवान कहते हैं, 'जो निष्कपट होकर मेरे पास आता है, उसे मैं अपना रूप दिखाता हूँ।' इसलिए भगवान के आगे जो पूजा की जाती है, उसको कभी समझने की कोशिश नहीं करना। छोटा पत्थर भी भगवान हो जाता है।

भगवान को तुम किसी भी रूप में देख सकते हो। शिवलिंग में भी देख सकते हो, शालीग्राम में भी देख सकते हो, और तो क्या, बकरी के रूप में भी देख सकते हो। उसके लिए एक ही योग्यता होनी चाहिए – 'मोहि *कपट छल छिद्र न भावा।*' मन में कुछ और बाहर से कुछ, इसको कपट कहते हैं। कपट भगवान को ही नहीं, हम लोगों को भी पसन्द नहीं है। तुम्हारा नौकर, तुम्हारी स्त्री या तुम्हारे बच्चे मन में रखें कुछ और बोलें या करें कुछ और, तो बुरा लगता है न? तो भगवान को कैसे अच्छा लगेगा?

भगवान के सामने दिल खोलना है। चोर हो तो क्या हुआ? वेश्या हो तो हो, क्या फर्क पड़ता है? उपमा तो समाज ने दी है। ब्राह्मण या यादव का ठप्पा तुमको किसने दिया? भगवान ने तुमको ब्राह्मण या यादव बनाया क्या? ये सब तो हमने बनाये हैं। भगवान के सामने तुम केवल एक आत्मा हो, जो भटक रही है। संसार में रहते हुए जब तुम भगवान के पास जाते हो और उनसे प्रार्थना करते हो, तब तुम बिल्कुल भूल जाओ कि तुम नालायक हो। केवल एक बात याद रखो, भगवान हमारी प्रार्थना जरूर सुनेंगे। आखिर भगवान तुम्हारी बात क्यों नहीं सुनेंगे? तुम तो सुन रहे हो न? जब तुम सुनते हो, तब वही तो सुनते हैं! वही तुम हो। प्रार्थना करने वाले भी तुम हो और प्रार्थना सुनने वाले भी तुम ही हो! लेकिन हम लोगों का दिमाग चलता रहता है। गणेश जी ने दूध पीया या नहीं? गणेश जी ने दूध पीया कि नहीं, मुझे नहीं मालूम। लेकिन उज्जैन में काल भैरव को मैंने एक बोतल ब्रांडी जरूर पिलाई और वे पी गए! मेरे सामने सब ने ब्रांडी पिलाई और वे सब पी गए। *तू कहता कागद की लेखी, मैं कहता आँखन की देखी* – तुम तो किताब की बात कहते हो न? मैं तो आँखों से देखा हुआ कहता हूँ।

स्थूल से सूक्ष्म की ओर यात्रा

हर मनुष्य के अन्दर दिव्य शक्ति विद्यमान है, परन्तु वह इन्द्रिय सुख में शक्ति का अपव्यय कर देता है और उसकी अधिकांश शक्ति चिन्ता, क्रोध और भय जैसी मानसिक समस्याओं में लगी रहती है। जिस तरह अंधेरे कमरे में बैठकर सूर्य के प्रकाश को नहीं देख सकते, उसी प्रकार शक्ति के रहते हुए भी उस शक्ति को आप अनुभव नहीं कर सकते जब तक कि आप अन्दर नहीं झाँकेंगे। अज्ञानवश व्यक्ति अन्दर नहीं झाँकता और पूरा समय बाह्य जगत् के व्यवहारों में व्यतीत करता है। यही मनुष्य के दु:ख का कारण भी है।

संसार में रहकर बाह्य वातावरण से प्रभावित विचारधाराएँ और मान्यताएँ मन पर प्रभाव डालती हैं और वे ही आगे जाकर आदत, संस्कार एवं व्यक्तित्व बन जाती हैं। ये संस्कार इतने सूक्ष्म और गहरे तल में पड़ जाते हैं कि इन्हें बुद्धि से समझकर अलग नहीं किया जा सकता। बौद्धिक स्तर पर भले ही आप समझ लें कि यह ठीक है या गलत है, परन्तु व्यवहार में पड़े संस्कारों को नहीं बदला जा सकता। इन संस्कारों को मिटाने के लिए चित्त की शुद्धि करनी पड़ेगी और जैसे-जैसे चित्त शुद्ध होता जाएगा, पुराने संस्कार नष्ट होते जायेंगे और वैसे-वैसे शुद्ध आत्मा का दर्शन हो सकेगा। स्वानुभूत सत्य प्रामाणिक सत्य होता है।

चेतना का वास्तविक स्वरूप सूक्ष्म शरीर या कारण शरीर कहलाता है। जिस तरह आप पानी की सतह पर तैरकर एक किनारे से दूसरे किनारे पहुँचते हैं, उसी प्रकार साधक साधना की नाव पर स्थूल शरीर से सूक्ष्म शरीर तक पहुँचता है। इसके लिए लगातार अभ्यासरत रहना पड़ता है। यह कोई क्षणभर में प्राप्त होने वाली वस्तु नहीं है, क्योंकि मनुष्य के संस्कार बहुत गहराई में पड़े रहते हैं, जिनका ज्ञान बचपन में नहीं होता, मगर बड़े होने पर प्रतिक्रियाओं द्वारा देखा जा सकता है कि कितने गहरे संस्कार पड़े हैं। स्थूल स्तर पर इसका ज्ञान व्यक्ति को नहीं रहता, क्योंकि व्यक्ति सदैव बाह्य जगत् के व्यवहारों में लीन रहता है। उसे अन्दर देखने की फुरसत नहीं होती, इसलिए उसे मालूम भी नहीं कि मेरे अन्दर क्या है। जिस प्रकार धूल से भरे दर्पण में चेहरा नहीं दिखता या दिखता भी है तो विकृत-सा दिखता है, और धूल को साफ करने पर जैसा चेहरा है, ठीक वैसा ही देखने को मिलता है, उसी प्रकार चित्त में संस्कार रहने से उसका रूप नहीं दिखलाई देता, परन्तु चित्त की शुद्धि करने

से उसका रूप देखा जा सकता है। चित्त की शुद्धि के लिए अपने स्वभाव को जानना जरूरी है और यह साधना द्वारा ही सम्भव है।

योग में चित्त-शुद्धि की बहुत-सी साधनाएँ हैं, पर हर साधना का प्रभाव अलग होता है, अर्थात् कुछ साधनाएँ ऐसी हैं जिन्हें साधारण व्यक्ति नहीं सह सकता। इसलिए जिस किसी को भी शक्तिपात या आत्म-दर्शन नहीं कराया जा सकता। सामान्यत: व्यक्ति तीन प्रवृत्तियों के होते हैं – तामसिक प्रवृत्ति, राजसिक प्रवृत्ति और सात्त्विक प्रवृत्ति। इन तीनों प्रवृत्तियों के लिए अलग-अलग साधनाएँ हैं। यदि तामसिक प्रवृत्ति के व्यक्ति को सात्त्विक प्रवृत्ति के योग्य साधना कराई जाएगी, तो वह रोगी या पागल भी हो सकता है। इसी कारण से साधक की प्रकृति के अनुसार ही गुरु उसे साधना करने की सलाह देते हैं।

जीवन का लक्ष्य

जो अपने जीवन का लक्ष्य जानते हैं, उन्हें इसका महत्त्व समझाने की आवश्यकता नहीं, परन्तु जो नहीं जानते, वे एक बार अपने से पूछें कि उन्हें यह मनुष्य जन्म किसलिए प्राप्त हुआ है। कुछ लोग कहेंगे – खाने-पीने और मौज उड़ाने के लिए, मगर ईमानदारी से वे अपने से पूछें कि क्या वे इस देह के द्वारा वास्तव में मौजीराम की तरह जीवन बिताते हैं। क्या उन्हें शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, कोई भी कष्ट नहीं है? यदि जरा भी कष्ट है तो इसका अर्थ है कि आप जीवन को जिस रूप में देखते हैं, वह गलत है। खाने-पीने और मौज उड़ाने के लिए भी इस शरीर, मन और भावनाओं का ख्याल आपको करना ही पड़ेगा। क्या आप जीवन के अंतिम क्षण तक मौज उड़ा सकते हैं?

नहीं। तब इसका अर्थ है कि आपके जीवन का लक्ष्य वह नहीं। मौज आपके जीवन की एक जरूरत है, परन्तु जीवन का लक्ष्य है समाधि।

आज समाधि का प्रायः गलत अर्थ लगाया जाता है। श्वास को रोक लेना और जमीन में कई दिनों तक पड़े रहना समाधि नहीं है। समाधि का अर्थ है चित्त का समाहित हो जाना, इन्द्रियों के अनुभवों से ऊपर उठ जाना। वह है वास्तविक समाधि। ज्ञान द्वारा समाधि प्राप्त होती है। जब पूर्ण ज्ञान हो जाता है, वही समाधि है। प्रत्येक व्यक्ति उसे प्राप्त कर सकता है। व्यावहारिक जीवन में सफलता के लिए व्यक्ति, चाहे वह गृहस्थ, ऑफिसर, व्यापारी, डॉक्टर या वकील, कुछ भी हो, उसे कर्म में सफलता के लिए ज्ञान प्राप्ति की जरूरत है और वही समाधि की राह है। यह ज्ञान शास्त्र, पुराण आदि पढ़ने से प्राप्त नहीं होता। जो कुछ लिखा गया है – वे सिद्ध संत-महात्माओं के अनुभव हैं, परन्तु आप उन्हें केवल पढ़कर प्राप्त नहीं कर सकते, क्योंकि आपके विचार, कर्म, मान्यताएँ उनसे भिन्न हैं। उनकी प्रक्रियाएँ आप पर दूसरी हो सकती हैं। आपको ज्ञान प्राप्ति के लिए स्वयं अभ्यास करना होगा और इसे समझना होगा।

लोग इन सब बातों को प्रायः नहीं समझते। वे सोचते हैं, 'हमें तो अपना कर्म करना है, घर-गृहस्थी संभालनी है। हमें इन सब पचड़ों से क्या लेना-देना?' पर आप देखेंगे कि व्यक्ति के कर्म, विचार, सिद्धान्त और परिस्थिति में विरोधाभास होने पर उसे परेशानी हो जाती है। उनके साथ वह समझौता नहीं कर पाता और वे समस्याओं के कारण बन जाते हैं, जिससे उसके कार्य और व्यवसाय में बाधा उत्पन्न हो जाती है। इन सबके लिए मानसिक सन्तुलन जरूरी है जो ज्ञान द्वारा प्राप्त होता है, बुद्धि द्वारा नहीं। इसके लिए व्यक्ति को योग मार्ग पर चलना होगा, अपने अन्दर के सुषुप्त ज्ञान को जगाने की विधि को अपनाना होगा। इसी के द्वारा वह अपने जीवन के अन्तिम लक्ष्य, समाधि को प्राप्त कर सकता है।

कष्ट और मानसिक अनुभूति

गृहस्थ जीवन को सुखद बनाने के लिए कष्टों को जानना जरूरी है, तभी उनका निवारण संभव है। कष्ट एक अनुभूति है जो समय, परिस्थिति और आवश्यकता पर निर्भर रहती है। परिस्थिति के अनुसार एक ही कर्म का अलग-अलग प्रभाव पड़ता है। जैसे एक बार एक सज्जन ट्रेन में सफर कर रहे थे। उनके रुपये चोरी हो गए, इसलिए वे कुछ खा नहीं सके। चौबीस घण्टे के सफर के बाद घर पहुँचे तो खाना खाया और भोजन करते हुए अपने दिनभर के उपवास के लिए

बार-बार परेशान हो रहे थे कि कैसे मैंने बिना खाये चौबीस घण्टे बिता दिए। मगर कुछ दिन बाद एक बच्चे के मुण्डन संस्कार में उन्होंने उपवास किया, उस दिन उन्हें भूख नहीं लगी। वह दिन गुजर गया, मगर उन्हें कोई परेशानी नहीं थी। परिस्थितियों का असर व्यक्ति पर अलग-अलग पड़ता है।

कष्टों का मूल कारण है आसक्ति। कर्म, विचार, भावनाओं और मान्यताओं के प्रति आसक्ति से ही व्यक्ति को मानसिक कष्ट होता है। जैसे, आपके घर के सामने से लाश जाती है। आप कहते हैं, किसी की मृत्यु हो गई। मगर न आपका हृदय भर आता है, न आँखें डबडबाती हैं, न आपको उस व्यक्ति के बाल-बच्चों की समस्या का ख्याल आता है। किन्तु अपने किसी रिश्तेदार की मृत्यु पर आपके विचार बदल जाते हैं। यह है आसक्ति और अनासक्ति का परिणाम। आसक्ति का मूल कारण है अज्ञान। जब आपको यह ज्ञान हो जाए कि आप और ये ऊपरी बातें, दो अलग-अलग चीजें हैं, तो आपको यह कष्ट नहीं होगा।

आपका बाह्य जगत् से सम्बन्ध केवल एक अभिनेता की तरह है, जो मंच पर एक रूप में होता है, परन्तु मंच से बाहर उसका रूप ही दूसरा हो जाता है। यदि आप इस बात को समझ लेंगे तो आपको कष्ट नहीं होगा। आप पर दु:ख आयेगा ही नहीं, ऐसा हम नहीं कहते, मगर उसके प्रति आपका दृष्टिकोण दूसरा होगा। इसके लिए आपको अपने को सूक्ष्म के साथ जोड़ना होगा, जो कि आपके अन्दर है। अपने को सूक्ष्म के साथ जोड़ने के लिए उपनिषदों में कई जगह सुझाव दिए गए हैं। हंसोपनिषद् में कहा गया है –

सर्वेषु देहेषु व्याप्य वर्तते यथा ह्यग्नि: काष्ठेषु तिलेषु तैलमिव।
तं विदित्वा न मृत्युमेति।

जिस प्रकार लकड़ी में अग्नि और तिल में तेल व्याप्त है, उसी प्रकार समस्त देहों में हंसो-हंसो करता हुआ परब्रह्म विद्यमान है, जिसको जान लेने वाला मृत्यु को पार कर जाता है।

जैसे दो पत्थरों की रगड़ से अग्नि निकलती है, मथनी द्वारा मन्थन कर घी निकाला जाता है, उसी प्रकार ध्यानयोग के मन्थन द्वारा शरीर में छिपे परमात्मा को प्रकट किया जा सकता है। श्वेताश्वतरोपनिषद् में कहा है –

स्वदेहमरणिं कृत्वा प्रणवं चोत्तरारणिम्।
ध्याननिर्मथनाभ्यासात् देवं पश्येन्निगूढवत्॥

अपने शरीर को नीचे की अरणि और ॐकार, अर्थात् प्रणव को ऊपर की अरणि बनाकर मन्थन करो। यह मन्थन है क्या? कैसे किया जाता है? इसका उत्तर है – अजपा जप। यह मन्त्र ऐसा अभ्यास है, जिसके द्वारा स्थूल का मन्थन कर सूक्ष्म को प्रकाशित किया जा सकता है।

स्थूल और सूक्ष्म

जिस प्रकार विज्ञान में प्रयोग का विषय निर्जीव एवं स्थूल वस्तुएँ हैं, उसी प्रकार अध्यात्म मार्ग में मनुष्य स्थूल से सूक्ष्म की ओर जाता है। स्थूल और सूक्ष्म एक-दूसरे में व्याप्त, एक-दूसरे से सम्बन्धित होते हुए भी एक-दूसरे से अलग हैं। स्थूल से सूक्ष्म का अनुभव नहीं किया जा सकता और सूक्ष्म से स्थूल के साथ सम्बन्ध नहीं रखा जा सकता। निद्रा में आपको बाह्य जगत् का कोई ज्ञान नहीं रहता, और जब जग जाते हैं तब स्वप्नलोक का ज्ञान नहीं रह जाता। यद्यपि स्वप्न और जागृति की चेतना एक ही होती है, फिर भी वह दो मालूम होती है क्योंकि हम दोनों अनुभवों को एक साथ प्राप्त नहीं कर सकते। जैसे नदी के दो किनारे नदी के अभिन्न अंग हैं, पर उसके एक किनारे पर खड़ा व्यक्ति दूसरे किनारे पर अपने आप नहीं जा सकता, उस पार जाने के लिए व्यक्ति को पुरुषार्थ और साधन का सहारा लेना पड़ेगा, वैसे ही स्थूल और सूक्ष्म जुड़े होने पर भी कोई व्यक्ति सहज ही एक की सीमा को पार कर दूसरे तक नहीं पहुँच सकता।

साधना का मुख्य उद्देश्य है – आत्मशक्ति को सदैव सचेत रखना और आत्मशक्ति का ज्ञान हमेशा बनाये रखने की कला को प्राप्त करना। हमारा

वास्तविक स्वरूप ज्ञानमय, ज्योतिर्मय, शक्तिमय है – इस सत्य का यथार्थ ज्ञान और हर समय अनुभव, यही सूक्ष्म तक पहुँचने का उपाय है। साधना की डोर पकड़कर अन्दर झाँकने से वह मार्ग दिखलायी पड़ेगा।

अन्दर की खोज

आत्मा को जानने के लिये सर्वप्रथम मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार की सतहों को भेदना पड़ेगा। इन सूक्ष्म तत्त्वों से गुजरते समय अपनी चेतना को बनाए रखना पड़ता है। यदि इस चेतना को बनाए रखने में साधक असफल रहा तो उसे अनुभूति का ज्ञान नहीं होगा। जैसे निद्रावस्था में हम लोग कारण शरीर में जाने पर भी उसको जान नहीं पाते, क्योंकि चेतना नहीं रहती। इसलिए उसको निद्रा कहते हैं। जाग्रत अवस्था में सूक्ष्म तक पहुँचने को समाधि कहते हैं। सूक्ष्म के ज्ञान को बुद्धि द्वारा नहीं तौला जा सकता। सूक्ष्म की अनुभूति बुद्धि के परे की चीज है। इसको जानने के लिए किताबी ज्ञान काम नहीं आएगा। उसके लिए आपको साधना की डोरी पकड़नी ही पड़ेगी, जिससे आप उन दिव्य अनुभूतियों का स्वयं अनुभव कर सकें। इसके लिए सरलतम उपाय है प्रार्थना। प्रार्थना के लिए बुद्धि की जरूरत नहीं, वह भावाभिव्यक्ति है। और दूसरा उपाय है अजपा।

अजपा की डोरी

सूक्ष्म को पकड़ने के लिए आप अजपा-जप का अभ्यास करें। अजपा एक ऐसी डोरी है जिससे स्थूल और सूक्ष्म को जोड़ा जा सकता है। अजपा करते-करते मनुष्य की चेतना धीरे-धीरे सूक्ष्म होती जाती है और एक ऐसी भी अवस्था आती है जब मनुष्य सूक्ष्म में चला जाता है। सन्त कहते और गाते हैं कि प्राणों की डोरी में दो पंछी बंधे हुए हैं। एक का नाम सुरति और दूसरे का निरति है। ये दोनों पक्षी डोरी के सहारे ऊपर-नीचे होते रहते हैं। ऊपर-नीचे करते-करते थककर ये हृदय-कमल में एक हो जाते हैं। यही है चौथा पद, जिसके विषय में एक सन्त ने लिखा है, 'चौथा पद पाया सन्तों, चौथा पद पाया।' सुरति और निरति मानो पक्षियों का एक जोड़ा है। सुरति शब्द का अर्थ चेतना और निरति का अर्थ है विषयों से उपरति, यानी इन्द्रियों से अपनी चेतना को धीरे-धीरे खींचते जाना और उसे सुरति में या स्वत: चेतना में परिणत कर देना। यही है अजपा-जप की गहन साधना।

सत्यम् वाणी

गतांक से आगे

ग्राम उद्योगों का महत्त्व

सामाजिक हिंसा के बढ़ने का एक और कारण है, भारी उद्योग बनाम कुटीर उद्योग। गाँधीजी की भाषा में इन्हें ग्राम उद्योग कहते हैं। गाँवों में अगर हर आदमी को कुछ उद्योग मिल जाये तो दो-ढाई रोटी तो खा ही लेगा। जिस आदमी को दो-ढाई रोटी के लिए कुछ मेहनत करनी पड़ती है, अनुपात के अनुसार उस आदमी को हिंसा के लिए समय नहीं मिलता। हिंसा के लिये समय उन्हीं लोगों को मिलता है, जिनके पास काफी फुर्सत है।

एक बात और है। भारी उद्योगों से एक मिडिल क्लास का, मध्यम वर्ग का जन्म हो रहा है, जो जानता कम है, पर बोलता ज्यादा है, और जो कुछ भी बोलता है, उसमें सार नहीं है। चाहे वह वैचारिक स्वतंत्रता की बात बोले, चाहे मानवाधिकार की, वही बोलता है जिसे उसने किताबों में पढ़ा है। मध्यम वर्ग भारी उद्योग के कारण ही जन्म ले रहा है, जबकि ग्राम उद्योगों में हमलोगों ने रुचि नहीं दिखाई। यह आंदोलन अब ठंढा पड़ गया है। गाँधीजी ने इस पर काफी जोर दिया था और कुछ अच्छा काम हुआ भी था, पर वह अब ठंढा पड़ गया है जिसके कारण हिन्दुस्तान की बहुत बड़ी जनसंख्या आज कष्ट-पीड़ित है। जो कुछ भी विकास हिन्दुस्तान में हो रहा है वह गिने-चुने शहरों में ही हो रहा है, जिसका यहाँ गाँव-देहात में कोई मतलब नहीं है। ग्रामीण वर्ग की उपेक्षा हुई है।

जब शान्ति की बात कही जाती है तो इस बात पर जोर देना पड़ेगा। हिंदुस्तान में सरकार और संस्थाओं को गाँवों में उसी तरह से काम करना होगा जैसे दिल्ली, बैंगलोर, पुणे, हैदराबाद, कलकत्ता या पटना में काम करते हैं। मगर होता नहीं है। उसके पीछे सीधा-सा कारण है। जब उद्योग धन्धों में पैसा लगाया जाता है, तो मुनाफ़ा बहुत आता है। वह मुनाफ़ा राष्ट्र को भी आता है, मंत्रियों और अफसरों को भी आता है, और यहाँ गाँवों में अगर निवेश करेंगे तो वह मुनाफ़ा नहीं होगा। यहाँ चाहे पानी का तालाब बनाना हो, खेती का काम बेहतर करना हो, छोटे-मोटे अस्पताल या अनाथालय बनाना हो या ग्राम उद्योगों को बढावा देना हो, उसमें उनको मुनाफ़ा नहीं मिलता, और जब मुनाफ़ा ज्यादा नहीं मिलेगा तो फिर करना ही क्यों?

मुनाफे की बात तो भौतिक पक्ष हो गया, मगर इसका एक आध्यात्मिक पक्ष भी है। हिन्दुस्तान के गाँवों में देश की अधिकांश आबादी बसती है। यदि उन लोगों के लिए कुटीर उद्योग, ग्राम उद्योग, लघु उद्योग, हस्त-शिल्पकला उद्योग आदि की व्यवस्था की जाए तो बहुत कल्याण हो सकता है। हस्त-शिल्पकला दो-तीन प्रकार की तो नहीं है, हजारों प्रकार की है। हिन्दुस्तान कलाओं का देश रहा है, पर आज ये कलाएँ खत्म हो रही हैं। अगर इन लोगों को ये चीजें मुहैया करा सको, डिफेंस बजट में से थोड़ा पैसा कम करके, खेलों से थोड़ा अंश लेकर, सब मंत्रालयों से कुछ प्रतिशत राशि लेकर तो कुछ बात बन सकती है। हम तो कहेंगे कि यहाँ के लिए एक अलग सरकार और व्यवस्था ही बना दो। यह कलेक्टर-कमिशनर के हाथ की बात नहीं है, वहाँ पर तो पूर्ण विराम लग जाता है। इसे अलग ढंग से करना पड़ेगा।

गाँवों में एक बार आपको थोड़ी भी सफलता मिल गई तो शहरों में आपको मार-पिटाई करने वाले नहीं मिलेंगे। आखिर गाँव के लोग ही मजबूरन शहर में जाते हैं, वहाँ झुग्गी-झोपड़ियों में रहते हैं। अगर गाँव में बिजली का या कुटीर धन्धे का काम मिलेगा तो सब वापस आयेंगे। शहर क्यों जायेंगे? वहाँ दो हजार रुपये में भी बसर नहीं होता, यहाँ तो चार-पाँच सौ रुपये में हो जाता है। इसलिए गाँवों का उद्धार करना होगा, क्षेत्रों को व्यापक बनाना होगा।

माला में 108 दाने होते हैं, सब अलग-अलग होते हैं पर सबको एक सूत में पिरोया जाता है। माला के दानों को आप क्षेत्र मानो और सूत को संघ मानो।

हर क्षेत्र की अपनी कीमत है, अपना स्वाभिमान है। बंगाली, उड़िया, पंजाबी, सब अपने को ऊँचा समझते हैं। हरेक का अपना एक गौरव है, अपना एक इतिहास है, अपनी विशेषता है। हरेक के अन्दर एक गजब का हुनर छिपा हुआ है। सर्वांगीण विकास के लिए राष्ट्र के नाम पर क्षेत्रों को कमजोर नहीं करना है।

धार्मिक उदारता

धर्म के सम्बन्ध में भी उदारवाद होना चाहिए। धर्मनिरपेक्षता न कहकर, सर्व-धर्म-स्वीकृति-भाव कहना चाहिए, सब रास्ते मेरे हैं। आज किसी को कलकत्ते से यहाँ आना है तो पश्चिम की ओर यात्रा करेगा, किसी को पटना से आना है तो पूर्व की ओर जाएगा। जिस दिन मुझे विष्णु जी का पूजा-पाठ-भजन करना है तो वैष्णव धर्म के मुताबिक करूँगा। जिस दिन मुझे भगवद्-भक्ति को वेदान्त में बदलना है तो सूफी विचारधारा रखूँगा। सूफी विचारधारा तो आशिक और माशूक की है। 'इश्क हकीकी, इश्क मिजाजी,' वहाँ भी राधाकृष्ण भाव है। भक्ति को ही अगर हम वेदान्त के रूप में समझें तो हम सूफी के रास्ते चलेंगे। रास्ते तो सब अपने ही हैं, कोई रास्ता दूसरा नहीं है। जब हमें करुणा के रास्ते

पर चलना है, दूसरों की मदद करनी है, सेवा करनी है तो उसके सबसे बड़े उदाहरण ईसा मसीह हैं। ईसा मसीह ने तो धर्म की परिभाषा इसी में दी है। धर्म की अन्तिम परिभाषा प्रार्थना नहीं है। 'स्नेह, प्रेम, करुणा, भक्ति से कोमल करो प्राण', इनसे व्यक्तित्व कोमल होता है। तो क्या ऐसा करने से हम ईसाई हो गये? क्या फर्क पड़ता है? तुम्हें कोई ठप्पा लगाने की जरूरत नहीं।

ईसाई धर्म में जो सेवा की भावना है, वह हमें बहुत प्रिय है। इसी तरह इस्लाम में भाईचारा है। हर धर्म में कोई विशेषता होती है और वह समाज और इंसान को उठाने के लिए होती है। हाँ, कुछ धर्मों में कुछ ऐसी बात होती है जो दूसरों से नहीं मिलती। पारसी पुनर्जन्म नहीं मानते। इस्लाम और पारम्परिक ईसाई धर्म में पुनर्जन्म की कोई संभावना नहीं है। चारवाक मत में भी पुनर्जन्म की कोई सम्भावना नहीं है। जैन लोग पुनर्जन्म मानते हैं, मगर दूसरे ढंग से समझाते हैं। अब इस भिन्नता के बिंदु को हमें एकता के बिंदु में बदलना पड़ेगा। जैसे संतरा होता है, अन्दर में सब फाँक रहती है, बाहर में एक रहता है। इसको कहते हैं अनेकता में एकता।

सर्व-स्तरीय-शान्ति

शांति के सम्बन्ध में एक और बात हम समझाना चाहते हैं। हिन्दुस्तान में शान्ति को तीन स्तरों पर देखा जाता है। इसलिए 'ॐ शान्तिः' नहीं, हमेशा 'ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः' कहते हैं। अपने यहाँ एक शान्ति मंत्र है, आपने सुना होगा – '*ओषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिः विश्वेदेवा शान्तिः*।' यह वेद का शान्ति मंत्र है। इसका मतलब यह है कि शान्ति केवल मनुष्य के दिमाग में नहीं होनी है, वनस्पति, जल, आकाश, सब जगह हम लोगों को शान्ति का तरीका निकालना पड़ेगा। अब खेतों में रासायनिक कृमिनाशक डालते हैं। उससे प्रकृति में, वनस्पतियों में असंतुलन आता है। धुआँ आसमान में उड़ रहा है, कहते हैं ओज़ोन लेयर तक पहुँच गया है। शान्ति मंत्र में जो-जो बिंदु लिखे हैं उन सब में शान्ति होनी चाहिए। शान्ति का राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक तरीका अपनी जगह ठीक है, मगर साथ ही पूरे पर्यावरण में शान्ति आनी चाहिए। वह हमलोग कर नहीं सकते हैं क्योंकि आज दुनिया इस कदर आगे जा रही है कि तूती की आवाज सुनने वाला कोई नहीं है। यह तभी हो सकता है जब मानव सभ्यता को चोट लगे, जब मानव जाति किसी दुर्घटना से होकर गुजरे। जैसे अशोक दुर्घटना से होकर गुजरा, वैसे ही कोई

बड़ी दुर्घटना होगी तभी इंसान चौंकेगा। 'अरे बाप रे! हो गया बस! परमाणु प्रयोग बंद करो भाई, अपने को नहीं चाहिए।'

शान्ति मनुष्य के जीवन की व्यापक आवश्यकता है। घर में तो तुम्हारे और तुम्हारे पिताजी के बीच झगड़ा चल रहा है, दो भाइयों में झगड़ा हो रहा है, और कहते हो कि देश में शान्ति है! शान्ति का मतलब होता है सर्व-व्यापक-शान्ति। इसलिए शान्ति के लिए हमेशा इसका तीन बार उपयोग हुआ है, शान्ति: शान्ति: शान्ति:। केवल राष्ट्र, समाज और व्यक्ति में ही नहीं, बल्कि मन के अन्दर भी शान्ति होनी चाहिए। अगर किसी को देखकर मेरे मन में बड़ी जलन होती है, मेरे मन में घृणा आती है, यह भी तो अशान्ति है। जब मनुष्य का मन विश्रांत नहीं होता, उसके मन को चोट लगती है, उसके मन में घृणा होती है, उसके मन में नासमझी और असहिष्णुता आती है। इन सबका जन्म अशान्ति से होता है।

इसलिये अशान्ति को हम हमेशा मानसिक अवस्था से जोड़ते हैं। इसको सम्भालने का सबसे अच्छा तरीका है कि हर देश के हर व्यक्ति को ऐसे काम में लगाओ, जिससे उसे आमदनी भी हो, जिसमें उसको अपना खून-पसीना भी देना पड़े और जिसको करने में आनन्द आता हो। शान्ति का यही रास्ता है। इसलिए महात्मा गाँधी हमेशा कुटीर उद्योग और ग्राम उद्योग पर भरसक जोर दिया करते थे। उससे आमदनी तो उतनी नहीं होती जितनी कारखानों में होती है, मगर ये छोटे-छोटे उद्योग इतनी बड़ी तादाद में है कि एक छोटे गरीब परिवार से लेकर करोड़पति के परिवार तक को उनकी आवश्यकता पड़ती है। फिर ऐसे देश में जहाँ आबादी इतनी ज्यादा है, ग्राम उद्योग ही समीचीन और प्रासंगिक है, जहाँ सब लोगों को हम काम बाँटकर रख सकते हैं। तभी उत्पात करने वालों की संख्या घटेगी।

अभी उत्पात करने वालों की संख्या ज्यादा है। गाँव का लड़का शहर में जाता है, वहाँ के तौर-तरीकों को वह समझ नहीं पाता, उसको झटका लगता है। फिर वहाँ की बातों को सीखने लगता है, कुसंग में पड़ जाता है क्योंकि सीधा आदमी है, और धीरे-धीरे उद्दण्ड हो जाता है। अगर उसी आदमी को अपने ही घर में कुछ छोटी-मोटी आमदनी का जरिया मिल जाता है, हम नहीं समझते कि वह बाहर जाना पसन्द करेगा। शान्ति का यही तरीका है। यह एक बहुत अहम चीज बोल रहा हूँ। गाँव में अगर 50 प्रतिशत लोगों को आप ग्राम उद्योगों के माध्यम से आमदनी दिला सकें तो आपकी बहुत बड़ी अशान्ति की समस्या का हल हो जाएगा। और अगर आप यहाँ बगल में भारी उद्योग

खोल देंगे तो गड़बड़ शुरू हो जायेगी। यहाँ बन्दूकें आ जायेंगी, लूटपाट होने लगेगी। यह तो स्पष्ट बात है, प्रमाण देने की क्या जरूरत है?

ग्राम उद्योगों में, जैसे लकड़ी के काम में, सोना-चाँदी के काम में, चूड़ी बनाने के काम में, सब छोटी जाति के लोग माहिर हैं। उसके लिए कोई बी.ए. बी.एस.सी. जैसी डिग्री की जरूरत नहीं पड़ती। आपको यकीन नहीं होगा, हम यहाँ जो भी काम करवाते हैं, किसी को बाहर से, यहाँ तक कि देवघर से भी नहीं बुलाते हैं। सब स्थानीय हैं, 1-2 मील के अन्दर के लोग हैं। आश्रम में ट्रान्सफॉर्मर बिठा दिया है। मेरे पास इन्टरनेट, ईमेल, फैक्स भी है। मैंने दिल्ली या पटना से किसी को नहीं बुलाया। सब छोकरे यहाँ के हैं। अब मैं सेटेलाइट टीवी लेने जा रहा हूँ, और यहीं के लोगों से कराऊँगा। मोटर में कुछ गड़बड़ होती है तो यहाँ बगल के गाँव में किसी को साइकिल से दौड़ाता हूँ। बिजली मिस्त्री आकर ठीक कर देता है। कितना माहिर है! तीन मंजिल की बिल्डिंग बना रहे हैं, मार्बल टाइल्स लग रहे हैं। सारा काम यहीं के लोग कर रहे हैं और यही लोग शहर में जाकर बदमाशी करने लगते हैं।

ये छोटे-मोटे उद्योग, जैसे कपड़े, मोजे, टोपियाँ बहुत चल सकते हैं। विदेशी लोग हिन्दुस्तान आते हैं, दो-चार डॉलर में मोल ले जाते हैं। राजस्थान के चमकने वाले कपड़े, जूते, सब ले जाते हैं। स्वामी सत्संगी क्या करती थी, मालूम है? यह लंदन जाती थी तो यहाँ से छत्तीसगढ़ की 40-50 पनही ले

जाती थी और वहाँ सड़क पर खड़े होकर बेचती थी। एक दिन तो इसके पैर की पनही ही बिक गई, मोजा पहनकर अपने घर आई। छत्तीसगढ़ की पनही मालूम है न, कड़े चमड़े की जूती, वहाँ काली मिट्टी के ऊपर चलने के लिए होती है। बंगाल में भी ऐसी चप्पल है। मैं एक उदाहरण दे रहा हूँ। चमड़े का काम है, कपड़े का काम है, लकड़ी का काम है, पत्तों का काम है, ऐसी पचासों चीजों का काम है जो गाँवों में हो सकता है।

ताइवान और कोरिया में घड़ियाँ बनती हैं न? सस्ते में बिकती हैं और एक साल के बाद खत्म हो जाती हैं। अरे, गरीब देश को टिकाऊ चीज बनानी ही क्यों चाहिए? आज के अर्थशास्त्र में ड्यूरेबिलिटी यानी टिकाऊपन एक बहुत बड़ी आर्थिक चोट है। इस बात को नजर-अंदाज नहीं करना। अब दस साल तक तुम्हारी साईकिल चल रही है, माने दस साल तक नई साइकिल बिकेगी नहीं। इतने बड़े देश के लिए टिकाऊपन आर्थिक दृष्टि से अनुचित है। जापान की उन्नति का यही कारण रहा है। बचपन में हम सुनते थे, 'जापानी माल 3-3 आना ले जा', हर एक चीज छ: आने में बिकती थी। टिकाऊ चीजों से बाजार मंदा होता है। एक टाईप-राइटर सालभर के लिए बनाओ, उसके बाद फेंक दो कबाड़ी में और दूसरा लाओ। तब देश की उन्नति होगी। यह चीज खासकर के ग्राम उद्योग के संदर्भ में आपको बतला रहा हूँ।

चूड़ियों का काम अच्छा है, हमारे यहाँ अगल-बगल में मुसलमान औरतें हैं, वे चूड़ियाँ बेचती हैं। शुरू में एक औरत आई जब उसका पति मर गया, उसे छः सौ की चूड़ियाँ लेकर दे दीं। हमने कहा, 'इन्हें बेचो, तुम खाओ।' यहाँ जितनी भी बेवा मुसलमान औरतें हैं, सब चूड़ियाँ बेचती हैं। हम बाजार से लेकर उनको एक डिब्बा बनाकर दे देते हैं। वे घर-घर जाकर बेचती हैं और उस पैसे से गुजारा करती हैं। इन सब चीजों पर हमलोगों को ध्यान देना चाहिए।

हमलोगों ने गाँवों को देश के विकास के नक्शे से हटा रखा है। हम किसी सरकार या पार्टी की आलोचना नहीं कर रहे हैं, मगर हम गाँवों में बहुत रहे हैं और आज भी रहते हैं। हमारा जीवन गाँवों में घूमते-घूमते बीता है। कुछ नहीं है वहाँ। शहरों में जाते हैं तो पंखा, टेलीफोन, एयर कन्डीशनर, सब कुछ है। देश की आर्थिक सम्पदा का उचित विभाजन होना चाहिए। चाहे वह पूँजीवाद के द्वारा हो या समाजवाद के द्वारा या साम्यवाद के द्वारा, उससे अपने को कोई मतलब नहीं, मगर जब तक यह समाजवादी देश था तब तक तो नहीं हुआ। आज पूँजीवाद आ रहा है, अब क्या होता है, हम नहीं कह सकते।

शान्ति के लिए उपयुक्त वातावरण

संयुक्त राष्ट्र संघ को इस बात पर विचार करना होगा कि शान्ति का रास्ता केवल बोलने से नहीं मिलेगा। शान्ति बोलने से नहीं आती। शान्ति के लिए एक वातावरण तैयार करना पड़ेगा। हर देश को अपने संविधान में हर धर्म, हर तहजीब, उनके देश में जितने लोग हैं उनकी भाषा, उनकी पाठशालाओं को स्वतंत्रता देनी पड़ेगी। अगर आज हम रिखिया में फ्रेंच स्कूल खोलना चाहें तो खोल सकते हैं। भारत सरकार मना नहीं कर सकती। मगर पश्चिम के देशों में ऐसा नहीं है। वैसे वे लोग हिन्दी सीखते हैं, फ्रेन्च सीखते हैं, मगर उनके संविधान में आना होगा। बॉस्निया में क्या हुआ? सारायेवो में क्या हो रहा है? कोसोवो में क्या हुआ? इसका कारण क्या है? इसका मुख्य कारण यही है कि उन लोगों ने अपने संविधान में वहाँ की मुख्य धर्म-धाराओं को समान स्वीकृति नहीं दी। उन लोगों को अपना हक लड़कर लेना पड़ा और लड़ने के लिए उनको बन्दूकें उठानी पड़ीं, क्योंकि वे बालकन हैं। बालकन लोग तो लड़ना जानते हैं, शान्ति से कोई बात नहीं होती।

एक और महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वातावरण को बिगाड़ने वाली सभी चीजों पर रोक लगनी चाहिए। चाहे वह परमाणु ऊर्जा हो या कोई और चीज, उस पर रोक लगनी चाहिए। शान्ति पर वार्ता केवल दार्शनिक नहीं होनी चाहिए, इसके अंतर्गत सभी व्यावहारिक पहलू आने चाहिए।

मानसिक कर्म ही वास्तविक कर्म है

शांति का उपयुक्त वातावरण अगर तैयार हो गया तो फिर कभी झगड़ा नहीं होगा, कोई मारपीट नहीं होगी, कोई मुकदमाबाजी नहीं होगी। अभी क्या होता है? कोई हिन्दू के बारे में कहता है, यह गाय नहीं खाता। अंग्रेज तो सूअर खा लेता है, मुसलमान सूअर नहीं खाता। कोई बोलता है वह घोड़ा खाता है। ये चीजें बहुत छोटी हैं, लेकिन इनका असर बहुत जबरदस्त होता है। इन सब चीजों को ठीक तरह से नई पीढ़ी को समझाना पड़ेगा। अरे भाई, जिसको खाना है अपना खाए, तुमको क्या फर्क पड़ता है, तुम्हारी थाली पर नहीं आयेगा, चलेगा।

एक बार मैं हवाई जहाज से जा रहा था। मेरी बगल में मेम साहब बैठी थी। मेरे लिए शाकाहारी भोजन आना था। उसका माँसाहारी खाना पहले आया। पहले तो वह मेरे लिए रुकी, पर मेरा खाना आने में देर हो रही थी।

मेरे लिए तो इडली-डोसा, पूड़ी-समोसा आने वाला था और उसके तो कटे हुए सब पीस आ रहे थे। उसने सोचा, मेरा खाना बाद में आएगा। जब बहुत देर तक देखा कि मेरी थाली में कुछ नहीं है, तो उसने अपनी थाली में से एक टुकड़ा मेरी तरफ बढ़ा दिया 'प्लीज़ हैव इट' बोलकर।

फिर आपने क्या किया, स्वामीजी?

कुछ नहीं, थैंक्यू बोला, खाया नहीं। थैंक्यू बोलने में तो कोई नुकसान नहीं है न! खाया नहीं, धन्यवाद बोल दिया। हमारी विचारधारा कुछ अलग है। दूसरा जो कुछ करता है, उसका भोक्ता वह है। दूसरी चीज, दूसरे के दिल को किसी प्रकार का दु:ख उत्पन्न न हो इसके लिए तुम एक सीमा तक जा सकते हो। अब मेरी थाली में वह बीफ था कि मटन था, यह तो मुझे मालूम नहीं, लेकिन उससे मेरा भोजन तो अशुद्ध नहीं होता। मेरा तो इडली-डोसा से काम था, वह मैंने खा लिया। वह भी अपना खाने में लगी, उसको यह भी पता नहीं चला कि मैंने खाया या नहीं।

अपने यहाँ एक कथा आती है। एक महात्मा जी का आश्रम था किसी नुक्कड़ पर और उसके सामने में एक नगरवधू का घर था। महात्मा जी दिनभर देखते रहते थे कि कौन आया, कौन गया। अपने चेलों से कहते थे, 'बदजात, बदचलन औरत है, देखो न, वह आ गया, सेठजी भी आ गया।' दिनभर वे यही करते थे, और जब उनके यहाँ कीर्तन-भजन होता था तो वह वेश्या उनके कीर्तन-भजन को ध्यान से सुनती थी, आनंद लेती थी। जब दोनों मरे तो यमराज के घर पहुँचे। यमराज ने महात्मा जी को तो भेज दिया जेल में और महिला को मुक्त कर दिया। महात्मा जी बिगड़े, बोले, 'हम जीवन भर पूजा करते रहे, हमें जेल क्यों भेजते हो? वह व्यापार करती रही, अपना शरीर बेचती रही और उसे मुक्त कर दिया।' यमराज ने कहा, 'देखो, कर्म मन से होता है। शरीर का कर्म बड़ा कर्म नहीं है। वह मन से भगवान का ही ख्याल करती थी और तुम मन से उसका ख्याल करते थे। तुमको अपने कर्म का फल मिला, उसको अपने कर्म का फल मिला है। वास्तविक कर्म मन से, भावना से, कामना से पैदा होते हैं।'

पाश्चात्य जगत् में कई ईसाई लोग योग का विरोध क्यों करते हैं?

उनमें असुरक्षा की भावना है, और कुछ नहीं। मैं तो कई बार मजाक करता हूँ, उनसे बोलता हूँ, 'भाई, तुम क्रिश्चिएनिटी-क्रिश्चिएनिटी बड़ी जोर से बोलते हो,

पर तुमको मालूम होना चाहिए कि आखिर क्राइस्ट तुम्हारे यहाँ पैदा नहीं हुए। वे तो एशिया की उपज हैं और क्रिश्चिएनिटी तुम्हारा अपना धर्म तो है नहीं, इम्पोर्टेड रिलीजन है, बाहर से आया हुआ धर्म है।' लड़के लोग हमारी बात मानते हैं, बड़े लोग थोड़ा-सा हिचकिचाते हैं। अब इस बात पर क्यों लड़ते हो? अरे, दूसरे धर्म वाले को भी आने दो न, दूसरी भाषा को भी आने दो। कई देशों में हिन्दी को, संस्कृत को बहुत मानते हैं। पढ़ना चाहते हैं। कई देशों में अपना जो संगीत है, चाहे वह हिन्दुस्तानी संगीत हो या कर्नाटक संगीत, उसको भी बहुत मानते हैं। मगर यह सब सीखने के लिए उन्हें यहाँ आना पड़ता है, वहाँ इतना अच्छा प्रशिक्षण नहीं हो पाता।

केवल एक ही चीज में ब्रेक-थ्रू हुआ है, गजब की सफलता मिली है, और वह है योग। यह ब्रेक-थ्रू कैसे हो गया योग में? बड़ा विचित्र घटनाक्रम है। 1968-69 के आसपास की बात है, वियतनाम में लड़ाई हो रही थी और अमेरिका के नागरिकों को सेना में जबरदस्ती भरती किया जा रहा था। यहूदी लोग तैयार नहीं थे, फिर भी उनको जाना पड़ता था। उन लोगों ने कानून में एक धारा खोज निकाली कि अमेरिकन सेना में उन्हीं को लिया जाये जो किसी सम्प्रदाय के साथ संबंधित न हों। यह एक लाइन मिल गयी उन लोगों को और उन्होंने एशिया से आए कुछ सम्प्रदायों को पकड़ना शुरू कर दिया। उस वक्त वहाँ प्रभुपाद भक्तिवेदान्त जी थे, हरे कृष्ण आंदोलन वाले, और हम थे। दोनों को पकड़ लिया उन्होंने। जब वे लोग हमारी योग कक्षा में आते थे तो

उन्हें योग का सर्टिफिकेट मिलता था। 18 साल होने पर जब उनको सेना से भरती होने का कागज आता था तो फॉर्म में नाम-वगैरह के बाद पूछा जाता था कि किसी सम्प्रदाय से संबंधित हो क्या? तो वे हाँ लिख देते थे – 'येस, योगा', 'येस, कृष्णा कांशसनेस', और उनकी भरती पर रोक लग जाता था।

यहाँ से अमेरिका में योग प्रचार का सिलसिला शुरू हुआ। जब मैं 1968 में वहाँ पहली बार गया तब मैंने परिस्थिति को तुरंत भाँप लिया। वहाँ 17-18 साल का एक यहूदी लड़का था, उसकी हम से मुलाकात हुई। वह अमीर घर का था, पर उसे भी जब सरकार से कागज आया तो वह मेरे पास आया और बोला, 'स्वामीजी, हम आपके शिष्य बनना चाहते हैं।' हमने कहा, 'तुम किसलिए ऐसा करना चाहते हो?' वह बोला, 'वह तो हम आपको बाद में बतायेंगे। पहले आप मुझे मंत्र दे दीजिये, कपड़ा दे दीजिये और नाम भी दे दीजिये। हम आपकी क्लास में आयेंगे।' हमने उसको दे दिया। करीब दो महीने बाद वह फॉर्म लेकर आया और नीचे मुझसे दस्तखत करवा लिया कि यह लड़का मेरे सम्प्रदाय का है। बस, छुट्टी पा गया। बाद में वह कई साल आश्रम में रहा, हमारा ड्राइवर भी था, और कई सालों तक पूर्ण मौन का अभ्यास किया। स्वामी भक्तानन्द नाम है उसका।

तब हमने सोचा, 'हाँ, स्वामी सत्यानन्द, बहुत अच्छा तरीका मिला है तुमको। अब सब को मूंड़ो।' सबसे पहले यहूदी लोग मेरे पास आये और फिर ईसाई लोग भी आये। 17-18 साल के लड़के बड़ी संख्या में आना शुरू हुए। फ्रांस में भी ऐसे ही आये, क्योंकि उस वक्त वियतनाम की लड़ाई में कोई जाना नहीं चाहता था। वह लड़ाई हनुमान जी की पूंछ की तरह बढ़ती ही जा रही थी, घटने का नाम ही नहीं ले रही थी। लोग लड़ाई में जाने के लिए तैयार नहीं थे, खासकर यहूदी लोग। हरे कृष्णा आंदोलन में भी अधिकांश यहूदी थे। वे अपने मजहब और परम्परा को बहुत मानते हैं।

यहूदी लोगों की परम्परा में आश्रम जीवन का बहुत बड़ा स्थान है। कभी इस्राएल जाने का मौका मिले तो किबूत्स में रहना, बिल्कुल आश्रम की तरह होता है। लड़के-लड़कियाँ वहाँ जाते हैं, कमरा मिल जाता है, वहाँ रहकर बगीचे का काम करते हैं, खेती का काम करते हैं, रसोई का काम करते हैं। जिम्मेदार व्यक्ति कोई नौकरी भी कर लेता है, पैसा लेकर आता है। यहूदी लोग किबूत्स, माने आश्रम प्रणाली को बहुत प्रोत्साहन देते हैं। वहाँ तुमको सैकड़ों की संख्या में मिलेंगे। 40-50 लड़के-लड़कियाँ मिलकर रहते हैं, समुदाय की

तरह चलाते हैं। फिर दो-तीन साल के बाद सब चले जाते हैं। कोई नौकरी में इधर चला जाता है, कोई शादी में उधर चला जाता है। इस परम्परा को वे लोग बहुत मानते हैं। जब वे लोग हमारे आश्रम में या हरे कृष्ण आश्रम में आते हैं तो उनको बहुत खुशी होती है।

दूसरी बात यह कि उनके यहूदी धर्म और अपने धर्म में ज्यादा फर्क नहीं है। वे लोग ब्रह्मचर्य पर बड़ा जोर देते हैं, अपने यहाँ भी ब्रह्मचर्य पर बड़ा जोर दिया जाता है। वे पवित्रता पर बड़ा जोर देते हैं, हमारे यहाँ भी ऐसा ही है। वे बोलते हैं कि लड़का लोगों को जल्दी उठना चाहिए, बैठकर पाठ करना चाहिए। उनके यहाँ भी लम्बे-चौड़े रीति-रिवाज रहते हैं, दो-तीन दिन तक चलते हैं। अपने यहाँ भी कई दिन तक कर्मकाण्ड चलते हैं। जो परम्परा उनके यहाँ चली है वह अपने यहाँ भी चलती है, इसलिए उनको कोई दिक्कत नहीं होती।

विविधता को स्वीकारना

अगर वे लोग उस वक्त लड़ाई का विरोध नहीं करते तो लड़ाई आगे भी चलती। अशांति और असहिष्णुता की ऐसी समस्याओं को संयुक्त राष्ट्र संघ के माध्यम से किसी तरह हटाना होगा। फ्रांस में तो उतनी दिक्कत नहीं है क्योंकि वहाँ प्रवासी कम हैं, मगर अमेरिका में तो समस्या हो जाएगी। उनकी आर्थिक परिस्थिति अगर गिरी तो वे हमलोगों की तरह सम्भाल नहीं सकेंगे।

यहाँ हिन्दुस्तान में कैसे सम्भाल रहे हैं? यहाँ डेढ-डेढ कोस में तो जुबान बदलती है, इतनी विविधता, इतना बहुजन समाज है यहाँ। सबका अपना-अपना तरीका है, कोई सोमवार को पूजता है तो कोई मंगलवार को तो कोई शनिवार को। साल भर में यहाँ दस नए साल आ जाते हैं, वह विक्रम संवत् का हो या बंगाली संवत् का या कोई और। ऐसी परिस्थिति में हमने सब कुछ स्वीकार किया है। इसका मतलब यह नहीं कि सरकार बंगाली संवत् माने या गुजराती संवत् माने, मगर हमने उनको स्वीकार किया है। शायद यह एकमात्र देश है जहाँ दस प्रकार के नए साल स्वीकार किये जाते हैं।

हम सब भाषाओं को स्वीकार करते हैं। हमारे संविधान में भाषाओं की लम्बी सूची आती है न, आठवें स्केड्यूल में? क्या अमेरिका कह सकता है कि हिन्दी उनके देश की भाषा है? लिख सकता है अपने संविधान में? लिखना चाहिए क्योंकि वहाँ लाखों हिन्दी भाषी जो हैं। ग्रीक, इटेलियन, फ्रेंच, स्पेनिश, चाइनीज़ – ये हमारे देश की भाषाएँ हैं, क्या ऐसा उन्होंने अपने संविधान में लिखा है? नहीं, बस लिख दिया, 'फ्रीडम ऑफ रिलीजियन, फ्रीडम ऑफ स्पीच' – धर्म और भाषा की स्वतंत्रता। संविधान में केवल स्वतंत्रता शब्द लिख देने से काम नहीं चलेगा। उसे परिभाषित करना होगा। वहाँ के संविधान में लिखा होना चाहिए कि यहाँ की भाषा हिन्दी, फ्रेंच, हीब्रू वगैरह हैं। संविधान की सूची में निर्धारित होना चाहिए कि ये इस देश की भाषाएँ हैं। यह बुनियादी काम है शांति के लिए। फ्रांस में लाखों अरबी भाषी लोग रहते हैं, क्या फ्रांस के संविधान में अरबी को फ्रांस की भाषा माना है? जिस देश में पचास-साठ लाख लोग एक भाषा बोलते हों, वह उस देश की भाषा माननी चाहिए। वह केवल मोरक्को या अलजीरिया की भाषा नहीं है। हाँ, वहाँ भी बोलते हैं, पर अब यह तुम्हारे देश की भाषा भी है। संविधान में यह कहना कि केवल फ्रेंच ही फ्रांस की भाषा है, या केवल अंग्रेजी ही इंग्लैण्ड की भाषा है गलत है। इंग्लैण्ड में लाखों लोग हिन्दी बोलने वाले हैं। उनका क्या जाता है अगर वे इंग्लैण्ड के संविधान में लिखें कि इंग्लैण्ड की ये-ये भाषाएँ हैं, उपभाषाएँ हैं, क्षेत्रीय भाषाएँ हैं या वर्गीय भाषाएँ हैं। जैसे भारत की राष्ट्रभाषा तो हिन्दी है, पर साथ ही तमिल क्षेत्रीय भाषा है, तेलुगु क्षेत्रीय भाषा है। ऐसा कहने में क्या जाता है, लेकिन वे लोग नहीं कहेंगे।

यही उनकी तथाकथित स्वतंत्र संस्कृति की बड़ी खामी है। अभी तो उनके पास टका है। तुमको और मेरे को लड़ाकर, हमें हवाई-जहाज और बम बेचकर

वे अपने बेरोज़गारों को, समाज के निचले वर्ग को हफ्ते दर हफ्ते भत्ता देते जाते हैं। कल अगर यह बंद हो जाये, हम खुद अपना हवाई-जहाज बना लें, सब हम बना लें, तब तुमसे क्यों लेंगे? तब इनको हफ्ता बंद करना पड़ेगा और तब वे सब लोग सड़क पर उतरेंगे। भाषा का मुद्दा उठेगा, आखिर राजनीति में कोई मुद्दा होना चाहिए न? देखियेगा, कल वहाँ ये सब मुद्दे उठने वाले हैं।

ये मुद्दे यहाँ नहीं उठेंगे। हिन्दुस्तान का केवल एक मुद्दा है, गरीबी। भ्रष्टाचार या अव्यवस्था यहाँ का मुद्दा नहीं है। यहाँ की गरीबी और बेकारी थोड़ा हटा दो, हिन्दुस्तान हमेशा अपना गुरु पद निभाएगा। आप दुनिया के किसी भी मुल्क में चले जाओ और उसको परखकर एक केरेक्टर सर्टिफिकेट, एक चरित्र प्रमाणपत्र दो। हिन्दुस्तान को हमेशा एक शांत, गम्भीर राष्ट्र का केरेक्टर सर्टिफिकेकट मिलेगा। एक उग्र, हिंसात्मक देश को यह सर्टिफिकेट नहीं मिल सकता। जब तक संन्यासी जीवित हैं इस देश की मौलिक विचारधारा बदलेगी नहीं, क्योंकि यहाँ सभी लोग संत-महात्माओं और साधु-संन्यासियों से जुड़े रहते हैं।

राष्ट्रीय एकीकरण

हम आपको एक बात बतलाते हैं। पूरे हिन्दुस्तान में, और नेपाल में भी पूजा में नारियल इस्तेमाल होता है। काश्मीर में बिना नारियल के पूजा नहीं होती, जबकि काश्मीर में नारियल नहीं होता। केवल काश्मीर ही नहीं, मैं एक बार बलूचिस्तान गया था। बलूचिस्तान में हिंगलाज तीर्थ है जहाँ पर एक चन्द्रकूप है। उस कुएँ में नारियल डालना पड़ता है। हमारे शास्त्रों में लिखा है कि जब कोई व्यक्ति भ्रूण-हत्या करता है तो उस पाप का प्रायश्चित हिंगलाज तीर्थ में होता है। हमने तो खैर कुछ किया नहीं, हम तो ऐसे ही घुमक्कड़ गए हुए थे वहाँ। कराची से बलूचिस्तान तक गए थे किसी काफिले में। हिंगलाज के पुजारी ने चन्द्रकूप में नारियल डलवाया और दक्षिणा भी ली। अच्छा, अब यह नारियल वहाँ कहाँ से आ गया? नारियल तो बंगाल में या फिर दक्षिण भारत में होता है। यह हमारी संस्कृति का बहुत बड़ा हिस्सा है। सुपारी हमारे यहाँ हर पूजा में चलती है। बिना सुपारी के तो भगवान प्रसन्न ही नहीं होते हैं। *पूगीफलं समर्पयामि* – पूगीफल याने सुपारी कहाँ होती है? दक्षिण भारत में। हिन्दुस्तान की भावनाओं को नारियल जैसी चीजों ने एक कर दिया।

दूसरी बात, हिन्दुस्तान में जहाँ भी लोग रहते हैं, रामेश्वरम् से काश्मीर तक और कटक से गुजरात तक, जब उनको तीर्थयात्रा करनी होती है तो सब

उत्तर भारत की ओर आते हैं। त्रिवेणी संगम में स्नान करने के लिए आयेंगे या वाराणसी में आयेंगे या चार धाम की यात्रा करेंगे। जब किसी को संन्यास लेना होगा तो दक्षिण भारत से उत्तर की ओर आयेगा। उत्तर से कोई भी आदमी संन्यास लेने के लिए दक्षिण भारत नहीं जाता। अगर यहाँ किसी को संन्यास लेना है तो पहली चीज है ऋषिकेश जाओ। राष्ट्र को एक करने के लिए एक अद्भुत परम्परा की जरूरत है, एक केंद्र की जरूरत है।

क्या शंकराचार्य ने यह परम्परा बनाई?

किसी ने यह परम्परा बनाई नहीं, यह अपने आप हो गया। कैसे हुआ, कब से हुआ? कुम्भ मेले का उल्लेख तो हर्षवर्धन के समय से मिलता है। तेरह-चौदह सौ साल हो चुके हैं। जगन्नाथ पुरी की रथयात्रा का जिक्र बाइबल में है। एक्वेरियन बाइबल में लिखा है कि क्राइस्ट ने जगन्नाथ पुरी की रथयात्रा देखी थी। दो हजार साल पुरानी बात है। यह परम्परा किसने बनाई होगी? कुछ ऐसे लोगों ने, जिन्हें मालूम था कि अलग-अलग मनुष्यों, जातियों और क्षेत्रों के बीच खाई को कम करने के लिए कुछ व्यावहारिक चीजों की जरूरत है, जैसे नारियल। अब नारियल जहाँ भी गया होगा मुफ्त में तो नहीं गया होगा, बिका होगा। केरल का नारियल जब बलूचिस्तान में बिक सकता है तो केरल के आदमी को क्या आपत्ति होगी? उसको तो पैसा मिल रहा है। अगर त्रिवेणी संगम में दक्षिण के लोग आते हैं तो त्रिवेणी वालों को क्या एतराज़? उन्हें तो फायदा ही है।

समाज को नजदीक लाने के लिए उसके स्वाभाविक स्वार्थों को भी जोड़ना पड़ेगा, केवल आध्यात्मिकता जोड़ना काफी नहीं है। अंत में किसी का नारियल, किसी की सुपारी, किसी का पान बिका न? अपने वैदिक धर्म में तो पान-सुपारी के बिना पूजा ही नहीं होती। *ताम्बूलपत्रं समर्पयामि पूगीफलं समर्पयामि* – मैं पान-सुपारी चढ़ाता हूँ। मनुष्य के निजी स्वार्थ का ध्यान रखना होगा, क्योंकि आदमी वैसे कुछ करे या न करे, स्वार्थ के लिए जरूर करता है।

– 25 मार्च 1998, रिखियापीठ

Swami Satya

Satyananda

ध्यान में प्रवेश

जब मैं अपने गुरुजी के साथ रहता था, एक रात मुझे एक अद्भुत स्वप्न आया। मुझे वह आज भी स्पष्ट याद है। उस सपने में मैं गंगाजी के तट पर लेटा था। शान्त, अंधेरी रात थी, आकाश में तारे टिमटिमा रहे थे। पूरा सपना बहुत ही स्पष्ट और उज्ज्वल था। मैंने मन-ही-मन सोचा, 'ओह, मैं तो स्वप्न देख रहा हूँ! अब देखता हूँ कि इस स्वप्न को हटा सकता हूँ या नहीं।' सपने में मुझे अपने हाथ दिख रहे थे। मैंने उनकी तरफ देखा और वह अंधेरी रात विलुप्त हो गयी, लेकिन मुझे पता था कि अभी भी मैं स्वप्न अवस्था में ही हूँ।

तब मैंने सोचा, 'अब देखता हूँ कि इसे दुबारा ला सकता हूँ या नहीं।' अपनी उंगलियों को वापस सपने में लाया, और रात में चमकते तारों का वह दृश्य फिर प्रकट हो गया। इसके बाद मैंने सोचा, 'मैं इस अनुभव को हटाकर दूसरा अनुभव प्राप्त करना चाहता हूँ। मैं पूर्णिमा का चाँद देखना चाहता हूँ।' मैंने फिर कोशिश की। रात का अंधियारा एक उज्ज्वल चाँद से प्रकाशित हो गया और तारे चाँदनी में धूमिल हो गए। मैं देखता गया। वह दृश्य बहुत ही सौम्य था। मैंने सोचा, 'मैं इसे फिर से हटाऊँगा।' जैसे ही मैं प्रयास करता, उस अनुभव से निकल पाता। फिर मैंने सोचा कि सूरज को देखूँगा, मध्याह्न का सूर्य नहीं, बाल रवि। मैंने गौर से देखा और वहाँ क्षितिज पर अब लाल रंग का उगता हुआ सूरज था!

इस दृश्य से भी निकलकर मैंने सोचा, 'अभी तक मुझे तारों से झिलमिल दो रातें, एक चाँदनी रात और एक सूर्योदय का दृश्य देखने को मिल चुका है। मैं अपनी अंतर्दृष्टि से अब जो चाहे देख सकता हूँ क्योंकि अपनी चेतना की गतिविधि को मैं नियंत्रित कर पा रहा हूँ।' मैं स्वप्नावस्था से बाहर निकल आया और इस अनुभव के बारे में अपनी डायरी में लिखा।

अगले दिन सुबह मैं अपने गुरुजी के पास कुछ टाईपिंग के कागज़ लेकर गया था और उन्होंने पूछा, 'क्या तुम किसी भी स्वप्न की रचना और फिर उसका विलय कर सकते हो?' मैंने उत्तर दिया, 'जी हाँ।' उन्होंने कहा, 'तुम अब ध्यान साधना प्रारम्भ कर सकते हो।' इससे आप समझ सकते हैं कि किस मानसिक स्तर पर आपको ध्यान साधना में प्रवेश करना चाहिये और किस हद तक मानसिक अभिव्यक्तियों पर नियंत्रण आवश्यक है। तभी आप ध्यान साधना में बहुत आगे तक जा सकते हैं।

पार्किन्संस रोग में प्राणायाम

शरीर विज्ञान की दृष्टि से पार्किन्संस रोग का कारण है – मस्तिष्क केन्द्रों में डोपामिन नामक ब्रेन-ट्रांसमिटर हॉर्मोन की कमी होना। यह हॉर्मोन स्नायविक सहयोग और सुसंचालन के लिये जिम्मेदार है। यह बीमारी डिजेनरेटिव है, इसका प्रभाव कई लोगों में जीवन के अंतिम वर्षों में होता है। चिकित्सा विज्ञान में डॉक्टर लोग इस हॉर्मोन की कमी को ठीक करके मस्तिष्क को सामान्य बनाने के लिये 'एल-डोपा' नाम के कृत्रिम हॉर्मोन की मात्रा रोगी को देते हैं।

योग में हम लोगों की धारणा कुछ अलग प्रकार की है। हमारा लक्ष्य प्राणायाम के प्रयोग से नाड़ी मण्डल को सन्तुलित करके मस्तिष्क के क्षेत्रों को पुन: अनुप्राणित और संचालित करना है। मस्तिष्क केन्द्रों की क्षतिकारक प्रतिक्रिया को नियंत्रित करके उसे विपरीत प्रक्रिया में ले जाना होता है। हमलोग इसमें 'मल्टीपल स्कलेरोसिस' के रोग के समान ही तरीका अपनाते हैं। इस रोग में क्या होता है? मस्तिष्क में कुछ तंत्रिकाओं को घेर कर रखने वाली माइलिन की संरक्षक और पोषक पर्त आकस्मिक रूप से विघटित होने लगती है। इससे वे नाड़ियाँ प्राणशक्ति और पोषण के अभाव में कमजोर होकर निष्क्रिय हो जाती हैं। तथापि यह प्रक्रिया उल्टी भी जा सकती है। 'मल्टीपल स्क्लेरोसिस' युवकों में होता है, इसलिये इसे दिशान्तरित करना आसान हो सकता है, क्योंकि उनमें रोग निवारण के लिये संकल्प, कटिबद्धता, परिश्रम और इच्छाशक्ति होती है। वृद्धों में ये सब बातें कठिन होती हैं।

पार्किन्संस रोग के लिये सबसे अच्छा अभ्यास है – नाड़ीशोधन प्राणायाम। इसमें अन्तर्कुम्भक और बहिर्कुम्भक, दो अवस्थाएँ हैं। अन्तर्कुम्भक में जालंधर बंध और मूलबंध लगाना चाहिये। बहिर्कुम्भक में इसके साथ उड्डियान बंध भी लगेगा। इस प्रकार अंतर्कुम्भक में दो तथा बहिर्कुम्भक के दौरान तीन बंधों को लगाया जाता है। नाड़ीशोधन में पूरक और रेचक का अनुपात 1:2 होना चाहिये। आरंभ में इसमें कुछ कठिनाइयाँ हो सकती हैं, लेकिन कोशिश करने से यह आसान हो जायेगा। इस अनुपात को हठपूर्वक 1:3 या 1:4 नहीं करना चाहिए, बल्कि 1:2 ही ठीक रहेगा। यह शरीर विज्ञान का बुनियादी श्वास अनुपात है। इससे ऊर्जा आपूर्ति की कमी को दूर किया जा सकेगा। आरम्भ में श्वास कभी तेज और कभी धीमी हो सकती है, लेकिन सावधानी

और लगन से करने पर धीरे-धीरे सब ठीक होगा। अन्ततोगत्वा पूरक और रेचक की मात्रा, गति और गुण में समानता आ जायेगी।

पार्किन्संस रोग से ग्रस्त व्यक्ति के लिये यह उपयोगी अभ्यास है। इसे रोज करना चाहिये। धीरे-धीरे इसकी आवृत्तियाँ बढ़ानी चाहिये। इससे कम समय में ही लाभ का पता चलने लगेगा। इसके लिये कुछ और भी अभ्यास हैं, मगर शुरू में इतना ही पर्याप्त होगा। मेडिकल चिकित्सा के साथ भी यह अभ्यास हो सकता है।

अगर इतना अभ्यास भी मुश्किल लगे तो इससे भी आरंभिक अभ्यास से शुरू करो। रोगी को आराम से बैठाकर कहो कि वे श्वास सजगतापूर्वक लेते और छोड़ते जायें। श्वास लेने और छोड़ने में पूरी सजगता रहे। इतना अभ्यास समझ में आ जाने पर बताओ कि दाहिनी नासिका को बंद करके सिर्फ बायीं से श्वास लेते-छोड़ते जायें। इसके बाद बायीं नासिका को बंद करके दाहिनी से श्वास लेने और छोड़ने को कहो। इसे कुछ बार कराओ। अब आगे चलो। बायीं से श्वास अंदर और दाहिनी से बाहर, दाहिनी से अंदर और बायीं से बाहर, इसे भी कुछ बार कराओ। इस तरह जैसे-जैसे वे समझते जायें, क्रमश: कराते जाओ, लाभ अवश्य मिलेगा।

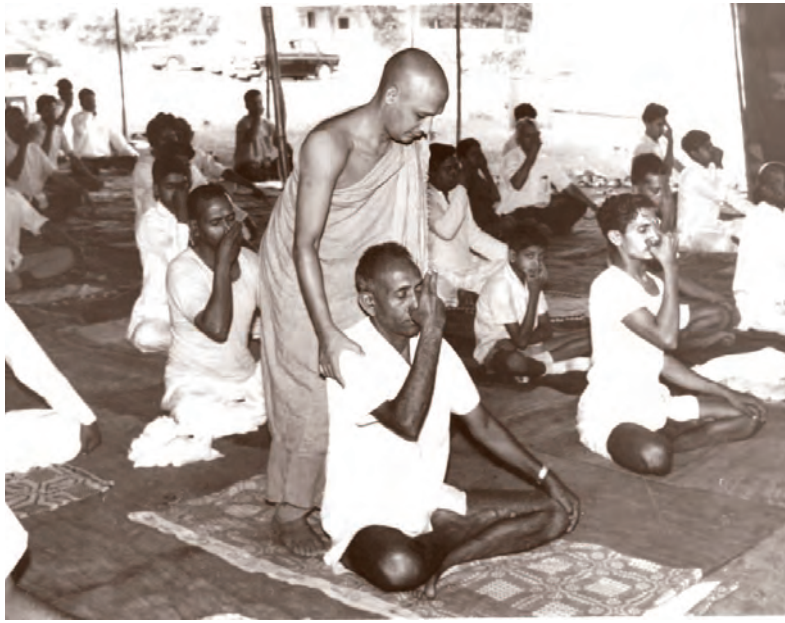

योग निद्रा – चंचल वानर को वश में करना

योग निद्रा के बारे में मैं अपने कुछ विचार आपसे साझा करना चाहता हूँ क्योंकि मुझे लगता है कि योग निद्रा को इसके बृहत् परिप्रेक्ष्य में समझना आवश्यक है। योग निद्रा एक ऐसा अभ्यास है जो मूलतः तांत्रिक परम्परा से लिया गया है। योग निद्रा का शाब्दिक अर्थ है, गहन निद्रा में योग की अनुभूति। इसलिए योग निद्रा का उद्देश्य बाह्य एवं आन्तरिक चेतना का योग है। ध्यान के अभ्यास सामान्यतया पद्मासन या सिद्धासन जैसे आसनों में किये जाते हैं, जबकि योग निद्रा का अभ्यास लेटकर, स्वयं को पूर्णरूप से विश्राम की स्थिति में लाकर किया जाता है।

कई वर्षों पूर्व जब मैंने योग निद्रा के अभ्यास का प्रतिपादन किया, तब लोगों को इसके अर्थ एवं उद्देश्य की समझ नहीं थी, लेकिन बाद में मैं उन्हें यह समझा पाया कि योग निद्रा के अभ्यास का वर्णन तंत्र शास्त्रों में पूर्व से ही विद्यमान है, जहाँ इसकी उपयोगिता का स्पष्ट उल्लेख है। अधिकांश व्यक्तियों

के विचार में रात्रि की गहन निद्रा, विश्रांति प्राप्त करने के लिए पर्याप्त है, लेकिन वास्तव में यह विश्रांति नहीं है। निद्रा से आपके शरीर को विश्राम प्राप्त होता है जबकि योग निद्रा से आपका शरीर एवं मन, दोनों विश्रांति की अवस्था को प्राप्त करते हैं। निद्रा की अवस्था में आपकी चेतना आपके सूक्ष्म शरीर में सुषुप्त रहती है, जबकि योग निद्रा में आपकी चेतना भीतर में जागृत रहती है।

पूर्ण सजगता

योग निद्रा के अभ्यास में विश्राम की स्थिति में भी अपनी सजगता की एकता को बनाये रखने पर विशेष बल दिया जाता है। इसका मतलब शिथिलीकरण की अवधि में आपकी चेतना को, जो सामान्यतया बहिर्मुखी रहती है, एकीकृत होकर आन्तरिक रूप से पूर्णतया सजग हो जाना चाहिए। इस प्रकार योग निद्रा में मानसिक एकीकरण की प्रक्रिया का अनुसरण करते हुए पूर्ण विश्रांति प्राप्त होती है।

पातंजल राजयोग में प्रत्याहार का उल्लेख है जिसमें मन और मानसिक सजगता का इंद्रियों से संबंध-विच्छेद हो जाता है। प्रत्याहार में सिद्ध हो जाने पर धारणा और फिर ध्यान की अवस्था का अनुभव प्राप्त होता है। योग निद्रा प्रत्याहार की ही एक विधि है। योग निद्रा के अभ्यास में व्यक्ति प्रसुप्त नहीं रहता, उसकी चेतना एक विशिष्ट अवस्था में सक्रिय रहती है। यह ऐसी अवस्था है जहाँ व्यक्ति न तो सोता है और न ही जागता है।

योग निद्रा में व्यक्ति मन की चेतन, अवचेतन एवं अचेतन, तीनों अवस्थाओं के प्रति सजग रहता है। चेतना की यह अवस्था इतनी गहरी होती है कि इसमें व्यक्ति की अपनी सजगता का भी पूर्णतया लोप हो जाता है। धारणा के अभ्यास में आपको इस बात का ज्ञान होता है कि आप एकाग्रता का अभ्यास कर रहे हैं, परंतु योग निद्रा के अभ्यास में एक बिंदु पर आकर आपकी यह सजगता भी समाप्त हो जाती है कि आप योग निद्रा का अभ्यास कर रहे हैं। जब मन का इन्द्रियों से संबंध-विच्छेद हो जाता है तब वह बहुत शक्तिशाली हो जाता है, लेकिन ऐसी स्थिति में प्रशिक्षण आवश्यक हो जाता है। मस्तिष्क की स्वचालित प्रणालियों को प्रशिक्षित करना आवश्यक है, अन्यथा फिर योग निद्रा एवं सामान्य निद्रा में कोई अंतर नहीं रह जायेगा।

योग निद्रा से दो मुख्य लाभ प्राप्त होते हैं – पहला, इसका अभ्यास व्याक्ति की थकावट को दूर कर शरीर को स्फूर्ति प्रदान करता है और दूसरा,

मानसिक तनाव को दूर कर मन की प्रफुल्लता को पुनःस्थापित करता है। हमारे अवचेतन मन में दैनिक जीवन के प्रभाव एकत्र होते रहते हैं जो आगे जाकर व्यक्ति की मानसिकता पर हानिकारक असर डालते हैं। जिस प्रकार मकान को गंदगी से मुक्त रखने के लिए उसकी प्रतिदिन सफाई आवश्यक है, उसी प्रकार स्वस्थ व्यक्तित्व के लिए अवचेतन मन पर प्रतिदिन जमने वाले संस्कारों को हटाना जरूरी है। योग निद्रा हमारी इस आवश्यकता की पूर्ति करती है। अवचेतन मन के अवरोधों को दूर कर यह हमें आध्यात्मिक उन्नति के पथ पर अग्रसर करती है।

महर्षि पतंजलि ने योग को चित्तवृत्ति-निरोध के रूप में परिभाषित किया है। मन की चेतन, अवचेतन एवं अचेतन अवस्थाएँ ही हमारा चित्त है, और हमारा व्यवहार हमारी चित्तवृत्तियों का ही परिणाम है। मन के इन तीनों आयामों की समग्र सजगता ही 'अहं अस्मि' अर्थात् 'मैं हूँ' की भावना है। जिस अवस्था में हम सजग तो रहते हैं लेकिन जागरूक नहीं होते कि हम सजग हैं, उस अवस्था का अनुभव योग निद्रा में होता है, और हमारे भीतर परिष्करण की एक सूक्ष्म किंतु निश्चित प्रक्रिया घटने लगती है।

अंतराग्नि

ऐसा कहा जाता है कि ध्यान से ऐसी आंतरिक अग्नि उत्पन्न होती है जो आपके समस्त पापों को जलाकर भस्म कर देती है। पाप हैं क्या? आपके ऐसे कर्म जो मन में विक्षेप एवं अशांति पैदा करते हैं, वही पाप हैं। कुछ आलोचक जन 'पाप' शब्द के अस्तित्व को ही अस्वीकार कर इसका उपहास करते हैं। जब कभी आपके किसी कार्य से आपके अंतर्मन को चोट पहुँचती है तो आपका वही कृत्य पाप कहलाता है। आलोचक जन भी इस नियम के अपवाद नहीं हैं, चाहे वे इसे मानें या न मानें। ध्यान की अवस्था में आपकी चेतना आपके अनेक आंतरिक स्तरों को भेदती जाती है। यही वह अंतराग्नि है जो आपके समस्त कुसंस्कारों को जलाकर भस्म कर देती है। तत्पश्चात् आप परमशांति एवं मानसिक स्थिरता की वह यौगिक स्थिति प्राप्त कर लेते हैं जिसका वर्णन श्रीमद्भवद्गीता के द्वितीय अध्याय में किया गया है। योग निद्रा इसी शांति को प्राप्त करने की एक मुख्य विधि है।

आपके अधिकांश मानसिक कष्ट और शारीरिक व्याधियाँ, जिनका दोष आप अपनी वर्तमान परिस्थितियों पर मढ़ते हैं, वास्तव में आपके भूतकाल से

सम्बंधित हैं। आपकी आधि-व्याधियों का कारण आपके मन में बाल्यावस्था से ही जड़ें जमाकर बैठी घटनाएँ या अनुभूतियाँ हो सकती हैं। इसलिए हर व्यक्ति को अपनी बाल्यावस्था से लेकर अब तक की अनुभूतियों की शृंखला का अनावरण और अवलोकन करना चाहिए। लेकिन ऐसे संस्कार और अनुभव आपके अवचेतन मन में इतने गहरे छिपे रहते हैं कि मन की पूर्ण विश्रान्ति के बिना इनको सतह पर लाना अत्यंत कठिन है। आप उनको न तो देख सकते हैं, न अनुभव कर सकते हैं, न जान सकते हैं। पूर्ण विश्रान्ति की अवस्था में जब मन, इंद्रियों और उनके वर्तमान अनुभवों को समेट लिया जाता है तब अवचेतन मन प्रकट होकर सतह पर आता है।

योग निद्रा के दौरान जब आपके अवचेतन मन को सतह पर लाया जाता है, तब आप अनेक ऐसे संस्कारों का अवलोकन कर सकते हैं जो बाल्यावस्था से आज तक आपके अवचेतन मन में जमा होते आ रहे थे। योग निद्रा में विश्रान्त होने के साथ-साथ पूर्ण सजगता बनाये रखने पर बल दिया जाता है।

अभ्यास की विधि

योग निद्रा का अभ्यास कैसे करें? सर्वप्रथम कुछ आसनों का, फिर कुछ प्राणायामों का और तत्पश्चात् योग निद्रा का अभ्यास करें। अच्छा होगा यदि इस विधि की शिक्षा आप गुरु के मार्गदर्शन में प्राप्त करें। इसका अर्थ यह नहीं कि स्वयं अभ्यास करने से आपको कुछ हानि होगी, लेकिन ऐसी स्थिति में आप योग निद्रा का अभ्यास करते-करते प्रायः सो जायेंगे। ऐसे में आपके

संस्कारों का उन्मूलन नहीं हो पायेगा और आपकी कोई विशेष प्रगति नहीं होगी। योग निद्रा में संपूर्ण सफलता के लिए गुरु-शिष्य के बीच गहन आत्मिक सम्बन्ध अपेक्षित है। गुरु के प्रति श्रद्धावान् शिष्य ही योग निद्रा के संपूर्ण लाभ प्राप्त कर सकता है।

योग निद्रा का अभ्यास भोजन के तुरन्त बाद नहीं करना चाहिए। योग निद्रा के पूर्व यदि त्राटक का अभ्यास किया जाये तो यह योग निद्रा के प्रभाव में वृद्धि कर देगा, परंतु यदि यह कठिन लगे तो फिर इसके स्थान पर शाम्भवी मुद्रा या फिर नासिकाग्र दृष्टि का अभ्यास किया जा सकता है। यदि आपने यह प्रारम्भिक तैयारी पूरी कर ली तो फिर गुरु को आपकी सहायता करने में आसानी होगी।

योग निद्रा या ध्यान के किसी भी अन्य अभ्यास में यह महत्त्वपूर्ण है कि आप स्वयं को नींद में डूबने न दें। योग निद्रा के दौरान निद्रा आपको परास्त करने का हर सम्भव प्रयास करती है, लेकिन अगर आप खुद को इस कमजोरी से बचा सकते हैं तो आपकी संकल्प-शक्ति बढ़ेगी, और दृढ़ संकल्प-शक्ति के सहारे आप जीवन में महान् उपलब्धियाँ प्राप्त कर सकते हैं। योग निद्रा में जब भी आपको नींद आने लगे तब आप अपने शरीर के प्रति सजग हो जाइये या नींद पर ही अपनी सजगता को केन्द्रित करने का प्रयास कीजिये और देखिये कि किस प्रकार नींद आपको अपने नियंत्रण में लेना चाहती है। इस समय अगर मन में दृश्य उभरते हैं तो उन्हें भी देखना शुरू कर दीजिये। योग निद्रा में जब भी आपको लगे कि आप अचेतन हो गए हैं तो इसका वास्तविक अर्थ है कि आप अपनी अचेतन स्थिति के प्रति पूर्ण सजग हैं, परंतु यदि आप सो जाते हैं, अपनी चेतना खो देते हैं तो यह योग निद्रा न रहकर मात्र निद्रा की स्थिति हो जाती है। इसलिए योग निद्रा के अभ्यास में आपके मन को किसी एक बिंदु पर स्थिर या एकाग्र न करके उसे लगातार एक बिंदु से दूसरी बिंदु की ओर घुमाया जाता है।

योग निद्रा का अभ्यास किसी योग्य योग शिक्षक या फिर रिकॉर्डिंग की सहायता से करना बेहतर होगा। योग निद्रा का अभ्यास स्वयं करने में समस्या यह है कि आप यह अभ्यास अपनी स्मृति एवं बुद्धि के साथ करेंगे जो नहीं होना चाहिए। निर्देश वही रहते हैं, अगर रिकॉर्डिंग में रहें तो ज्यादा प्रभावी होते हैं। प्रतिदिन एक ही प्रणाली दुहरायी जानी चाहिये। वही वाक्य, वही क्रम, वही आवाज होनी चाहिए, उसमें कोई अंतर नहीं होना चाहिए।

संकल्प

जो लोग अपने व्यक्तित्व एवं चेतना में प्रभावी परिवर्तन की अभिलाषा रखते हैं उन्हें योग निद्रा के प्रारम्भ एवं अन्त में कोई अच्छा संकल्प लेना चाहिए। योग निद्रा के दौरान आपकी चेतना अति संवेदनशील हो जाती है और इस कारण योग निद्रा में लिया गया संकल्प अवश्य पूर्ण होता है। यह आपकी चेतना के गहन आयामों का महत्त्व दर्शाता है। चेतना के ऐसे अनेक स्तर हैं जो हमारी सामान्य चेतना से कहीं अधिक गहन और प्रभावशाली हैं। चेतना के हर स्तर की अपनी सीमायें होती हैं। हमारी वर्तमान चेतना योग निद्रा में अनुभव की जाने वाली अवचेतन अवस्था से कहीं अधिक सीमित है। योग निद्रा से मानव जीवन में आमूल परिवर्तन संभव है। इसके माध्यम से हम अपने जीवन की दिशा परिवर्तित करके सकारात्मकता, सामंजस्य और शांति प्राप्त कर सकते हैं।

मैं योग निद्रा को चंचल बंदर को वश में करने की विधि कहता हूँ। वास्तव में यह बंदर के समान चंचल मन को साधने की विधि ही है। यदि योग निद्रा का अभ्यास समुचित ढंग से किया जाय तो इस विक्षिप्त, अव्यवस्थित, चंचल मन को वश में करके इसे बहुत सुंदर रूप दिया जा सकता है।

गलतियों में सुधार

गलतियाँ तो सबसे होती हैं, पर उन्हें केवल जान लेने से आदमी सुधरता नहीं है। कितने लोग शराब पीते हैं, सब जानते हैं गलती कर रहे हैं, मगर फिर भी पीते हैं। केवल यह जानना कि हम गलती कर रहे हैं, सुधरने के लिए पर्याप्त नहीं है।

हमारे विचार से गलती करके पछताना कोई अच्छा गुण नहीं है। हमारी तो इतनी अधिक अवस्था हो गयी, हमने आत्म-विश्लेषण बहुत किया है। हमें लगता है कि अगर किसी से गलती हो जाए तो उस पर पछताने से कोई समाधान नहीं मिलता। समस्या का समाधान होता है साधना से, प्रयत्न करने से। अगर व्यक्ति ज्यादा खाता है या गलत भोजन खाता है, तो उसका उपाय क्या है? अगर वह शराब पीता है या झूठ बोलता है, तो उसका उपाय क्या है? जो भी गलती वह करे, उसको एक-एक मुद्दा मानकर चलना होगा। सब गलतियों का एक ही समाधान नहीं होता।

चाय पीना हमारी बहुत बड़ी कमजोरी थी, क्योंकि हमारे कुमाऊँ में चाय पानी की जगह पी जाती है। ठण्ढा देश है, कौन पानी पीयेगा? दिनभर चाय पीते थे। ऋषिकेश आये तो चाय मिलती ही नहीं थी। खैर, हमने उपाय निकाला। हमने सोचा, चाय हमारी कमजोरी है, तो हम चाय बिना दूध मिलाये पीना शुरू कर देते हैं। और इस प्रकार हमारी चाय की कमजोरी दूर हो गयी। अब चाय पीकर भी रह सकते हैं और बिना पीये भी। यह कैसे हुआ?

हमने पता लगाया तो मालूम चला कि चाय में अफीम का घोल रहता है। जब चाय की पत्ती बनती है, तब उसको सड़ने से बचाने के लिए उस पर अफीम का घोल छिड़का जाता है। उस अफीम के घोल में जब दूध पड़ता है, तब वह तुम पर असर कर जाता है और चाय तुम्हारी आदत बन जाती है। तुम असल में चाय के लिए नहीं, बल्कि अफीम के लिए चाय पीते हो। जब हमको पता चल

गया कि चाय हमारी कमजोरी क्यों है, तब हमने बिना दूध की चाय पीनी शुरू कर दी। बाद में हमने उसमें एक और चीज जोड़ दी, नींबू। नींबू एक ऐसी चीज है जो नशे का तोड़ है। इस प्रकार हमारी चाय की कमजोरी दूर हो गयी।

अपनी कमजोरियों का इस तरह एक-एक करके समाधान खोजना पड़ेगा। पछताने से कोई फायदा नहीं। पछताने से गलतियाँ दूर नहीं होतीं, यह मेरा पक्का विश्वास है। पछताना मन की कमजोरी है। कमजोरी दूर करने का कुछ व्यावहारिक समाधान खोजो।

दोष परिष्कार का अधिकार

एक ब्राह्मण ने अपने आठ वर्ष के पुत्र को एक महात्मा के पास ले जाकर कहा, 'महाराज जी! यह लड़का रोज चार पैसे का गुड़ खा जाता है और न दें तो लड़ाई-झगड़ा करता है। कृपया आप कोई उपाय बताइये।'

महात्मा ने कहा, 'एक पखवाड़े के बाद इसको मेरे पास लाना, तब उपाय बताऊँगा।' ब्राह्मण पंद्रह दिनों के बाद बालक को लेकर फिर महात्मा के पास पहुँचा। महात्मा ने बच्चे का हाथ पकड़कर बड़े मीठे शब्दों में कहा, 'बेटा! देख, अब कभी गुड़ न खाना भला, और लड़ना भी मत!'

उसी दिन से बालक ने गुड़ खाना और लड़ना बिल्कुल छोड़ दिया। कुछ दिनों के बाद ब्राह्मण ने महात्मा के पास जाकर इसकी सूचना दी और बड़े आग्रह से पूछा, 'महाराज जी! आपके एक बार के उपदेश ने इतना जादू का काम किया। फिर आपने उसी दिन उपदेश न देकर पंद्रह दिनों के बाद क्यों बुलाया?'

महात्मा ने हँसकर कहा, 'भाई! जो मनुष्य स्वयं संयम-नियम का पालन नहीं करता, वह दूसरों को संयम-नियम के उपदेश देने का अधिकार नहीं रखता। उसके उपदेश में बल नहीं रहता। मैं इस बच्चे की तरह गुड़ के लिये रोता और लड़ता तो नहीं था, परन्तु मैं भोजन के साथ प्रतिदिन गुड़ खाया करता था। इस आदत के छोड़ देने पर मन में कितनी इच्छा होती है, इस बात की मैंने स्वयं एक पखवाड़े तक परीक्षा की, और जब मेरा गुड़ न खाने का अभ्यास दृढ़ हो गया, तब मैंने यह समझा कि अब मैं पूरे मनोबल के साथ तुम्हारे लड़के को गलती न करने के लिये कहने का अधिकारी हो गया हूँ।'

उपवास – योग के परिप्रेक्ष्य में

उपवास वह प्राकृतिक विधि है जो शारीरिक शक्तियों को उपचार प्रक्रिया हेतु सक्रिय कर देती है। उपवास पूर्णत: प्राकृतिक है, जिसका अनुभव प्रत्येक व्यक्ति को होता है। रात्रि में हर व्यक्ति उपवास ही रखता है और प्रात:काल उपवास को तोड़ता है। भारत में उपवास आध्यात्मिक जीवन का एक अंग है। विशेषकर स्त्रियाँ सप्ताह में एक दिन उपवास रखती ही हैं, या कभी-कभी पूर्णिमा, एकादशी या सावन सोमवार जैसे अवसरों पर उपवास रखती हैं। उपवास भी कई प्रकार से किये जाते हैं। कभी पूर्णत: निराहार रहकर, कभी फलाहार के साथ तथा कभी निर्जला उपवास भी किया जाता है। इस्लाम, बौद्ध, जैन व ईसाई धर्मों में भी उपवास का महत्त्व है। महात्मा बुद्ध और ईसा मसीह, दोनों ने ही आत्म-साक्षात्कार के पूर्व चालीस दिन उपवास किया था।

सभी धर्मों व सम्प्रदायों में सन्त-महात्मा आध्यात्मिक उन्नति के लिए उपवास करने की सलाह देते हैं। अन्य लोगों ने उपवास को शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से भी स्वीकार किया है। प्राकृतिक चिकित्सा में उपवास को प्राथमिक उपचार मानते हैं। पाचन सम्बन्धी दोषों को दूर करने के लिए भी उपवास लाभकारी सिद्ध हुआ है। यहाँ तक कि उपवास से एमेबिक डिसेन्ट्री में भी लाभ होता है।

उपवास क्या है?

उपवास का अर्थ भूखे मरना नहीं है। व्यक्ति किसी भी कारण से भूखा मर सकता है, जब उसके शरीर के पोषक तत्त्व समाप्त हो जाएँ, परन्तु सच्चा उपवास तभी होता है, जब शरीर में एकत्र तत्त्व उपवास करने वाले का पालन-पोषण करते हैं।

उपवास के द्वारा उपचार इस मान्यता पर आधारित है कि शरीर में ऐसी शक्ति विद्यमान है, जो सभी समस्याओं का निदान स्वयं कर सकती है। शरीर में स्वास्थ्य-रक्षक तत्त्व उस समय अधिक कार्य करते हैं जब उन पर पाचन का भार कुछ समय के लिए न पड़े। उपवास से आन्तरिक कार्य-प्रणालियों को विश्राम मिलता है। इससे उस शक्ति की बचत होती है, जिसका उपयोग विषाक्त तत्त्वों को निष्कासित करने के लिए किया जाता है।

पाचन नली में आहार का पाचन होता रहता है और अन्न के कण, अधपचा भोजन एवं जीवाणु बनते रहते हैं। यदि व्यक्ति को अति भोजन की आदत हो या कब्ज हो जाए तो अधपचा भोजन और जीवाणु भी बढ़ जाते हैं। यह अन्य कई रोगों के पनपने एवं अस्वस्थता का सामान्य कारण बन जाता है। पाचन-संस्थान की सफाई का सरलतम उपाय है कि एक-दो बार भोजन न करें। जब पेट में भोजन भरा नहीं होगा, तो शरीर के अन्दर जो कुछ बचा है, उसी का उपयोग होगा। विषाक्त तत्त्वों के बाहर निकलने तथा रक्त के शुद्ध होने से शरीर हल्का व फुर्तीला हो जाएगा।

कई लोग एक समय भी भोजन नहीं छोड़ सकते और डरते हैं कि कहीं शरीर की शक्ति कम न हो जाए। देखा जाए तो आजकल के कई आधुनिक

रोग जैसे मोटापा, मधुमेह और हृदय रोग भोजन की अधिकता के परिणाम हैं। इसलिए तो कहते हैं, 'आदमी अपने दाँतों से ही अपनी कब्र खोदता है।' जीवन बीमा के आँकड़ों के आधार पर देखा गया है कि जितना कम वजन होगा, आयु उतनी अधिक होगी।

रोग और उपवास

क्या आपने कभी किसी जानवर के व्यवहार का निरीक्षण किया है? अपने पालतू कुत्ते या बिल्ली की ओर गौर करें तो आप देखेंगे कि जब वे बीमार होते हैं तो किसी कोने में चुपचाप पड़ जाते हैं और कितना भी जोर डालने पर भोजन मुख में नहीं लेते। मनुष्य की प्रकृति भी उसे इसी प्रकार की चेतावनी देती है, परन्तु उसके लिए इस चेतावनी का अनुसरण करना कठिन हो जाता है। वह चाहकर भी अपनी इच्छा को रोक नहीं पाता और अरुचि के बावजूद भी खा लेता है। इस प्रकार अपने हाथों ही अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारता है।

लोगों का ऐसा विचार है कि भोजन से ही शक्ति मिलती है और भोजन न करने से शक्ति का ह्रास होता है। इसलिए रोगी की रुचि को बढ़ाने के लिए भोजन को स्वादिष्ट बनाकर उसे खाने के लिए मजबूर किया जाता है। रोग की सर्वप्रथम पहचान है, भोजन के प्रति अरुचि। यह स्वाभाविक व्यवस्था है, जो रोग से बचने के लिए प्रकृति ने बना रखी है। इसका ध्यान रखना स्वास्थ्य की दृष्टि से अति आवश्यक है।

जीवाणु जब शरीर पर चढ़ाई करते हैं, तब शरीर की रोग-प्रतिरोधक-प्रणाली प्रतिरक्षण के लिए आक्रमण कर देती है। जीवाणुओं से युद्ध करने के लिए शक्ति की आवश्यकता होती है। अत: आंतरिक शारीरिक मेहनत कम-से-कम करने का प्रयत्न करना चाहिए, क्योंकि भोजन पचाने के लिए अत्यधिक चयापचय जनित शक्ति की आवश्यकता होती है। शक्ति के इस भण्डार को जीवाणुओं से युद्ध करने के लिए सुरक्षित रखना जरूरी है। उपवास से विषाक्त पदार्थों के निष्कासन में सहयोग मिलता है और जीवाणुओं का बहिष्कार शीघ्र हो जाता है।

मांसाहारियों के लिए उपवास बहुत जरूरी है। जो लोग दुग्धाहार पर रहते हैं, उन्हें उपवास की उतनी जरूरत नहीं होती है, किन्तु शाकाहारी लोग जठराग्नि को बढ़ाने तथा पाचन-प्रणाली को तीव्र करने के लिए कभी-कभी उपवास कर सकते हैं।

उपवास को सब रोगों का अचूक इलाज कह देना बुद्धिमानी नहीं होगी। उपवास एक वैज्ञानिक पद्धति है जिसके नियमों को जानकर विभिन्न परिस्थितियों में इसके प्रयोग किये जा सकते हैं। इसलिए उपवास का अभ्यास उचित निर्देशन में किया जाना चाहिए। विशेषत: जब इसका प्रयोग चिकित्सा के रूप में किया जा रहा हो, तो रोगी की उम्र, रोग की अवस्था तथा कुछ अन्य मुद्दों पर विचार करना आवश्यक होता है। यदि कोई अंग ही खराब हो गया हो या विकलांग हो गया हो, तो उपवास उसे नहीं बचा सकता। यदि किसी अंग के कार्य सम्बन्धी कोई गड़बड़ी हुई तो उपवास सरल, सीधा एवं प्रभावकारी उपचार है। यह रोग की जड़ पर आक्रमण कर विष को शीघ्र शरीर से बाहर फेंकने में प्रकृति की मदद करता है। इसके अलावा उपवास आत्म-विश्वास को बढ़ाता है, तनाव को मुक्त करता है। उपवास चित्त को एकाग्र बनाता है, जो मानसिक तनावों को दूर करने के लिए आवश्यक है। तनाव ही रोगों का मूल कारण है।

उपवास मनोविज्ञान

उपवास उचित वातावरण एवं मानसिक स्थिति में किया जाना आवश्यक है। यदि कोई यह चिन्ता करने लग जाए कि शरीर में विषाक्त तत्त्व बढ़ रहे हैं या मोटापा बढ़ रहा है, तो ऐसी स्थिति में उपवास करने का कोई लाभ नहीं। ऐसे उपवास को प्राकृतिक भी नहीं कहा जा सकता। इससे लाभ की अपेक्षा वासना और भय में वृद्धि रूपी हानि ही होगी। ऐसे उपवास को हम भूखों मरना कह सकते हैं।

उपवास कब करना चाहिए, यह अपने आप पता चल जाता है। कई बार आंतरिक प्रेरणा होती है कि भोजन न किया जाए, कई बार भूख भी नहीं लगती या आप अस्वस्थ होते हैं, तब शरीर कहता है, 'कृपया अधिक भोजन न भरो।' इसे प्रकृति का संकेत समझना चाहिए।

व्रत के रूप में किये गये उपवास साधना की दृष्टि से ठीक हैं। यदि व्रत करने से भूख लग जाए तो आप अन्तर्मौन द्वारा अपनी आन्तरिक क्रियाओं का अवलोकन कर सकते हैं। इस प्रकार आप अपने मन एवं शरीर की क्रियाओं तथा जीवन में भोजन की महत्ता का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। आप अपनी मन:स्थिति, आदत एवं भोजन के स्वाद के प्रति अभिरुचि का द्रष्टा-भाव से अवलोकन कर सकते हैं। आन्तरिक सजगता, शक्ति और आत्म-विश्वास बढ़ाने में इस विधि से लाभ होता है।

उचित रीति से किया गया उपवास मन और शरीर के शिथिलीकरण में सहयोगी होता है, क्योंकि इससे शरीर एवं मन की गतिविधि नियंत्रित होती है। निम्नलिखित संकेतों द्वारा इसका अनुभव किया जा सकता है –

- श्वास की गति निर्विरोध होती है।
- शारीरिक गतियाँ अधिक सहज एवं सरल हो जाती हैं।
- थकान की अनुभूति नहीं रह जाती।
- पेट का भारीपन व तनाव हल्केपन में परिवर्तित हो जाता है।
- रक्तचाप कम हो जाता है।

उपवास कैसे करें

उपवास आरम्भ करने के पहले इसके नियम जान लेना श्रेयस्कर होगा। उपवास के पूर्व तैयारी जरूरी है। अपने साधारण भोजन में कुछ आरम्भिक परिवर्तन करना होगा। सर्वप्रथम गरिष्ठ भोजन का त्याग कर सरल सुपाच्य भोजन को अपनाइये। विशेषत: माँसाहारियों को उपवास प्रारम्भ करने के कुछ दिन पूर्व मांसाहार त्याग कर साधारण शाकाहार लेना प्रारम्भ कर देना चाहिए। शाकाहार के बाद कुछ दिन फलाहार तथा उसके बाद उपवास किया जा सकता है। उपवास की सफलता के लिए इन सुझावों पर ध्यान दें –

संभव हो तो उपवास का आरम्भ ग्रीष्मकाल में करें। शीतकाल में भोजन शरीर के तापमान को बनाये रखने के लिए आवश्यक होता है। रोगोपचार की दृष्टि से शीतकाल में भी उपवास किया जा सकता है। ऐसी अवस्था में रोगी को गर्म कपड़ों के द्वारा शरीर के ताप को बनाये रखने का प्रयत्न करना चाहिए।

कई बार परिवार के अन्य सदस्य आपके उपवास का कारण नहीं जानते। ऐसे में परेशानी हो सकती है। उनके द्वारा आप पर भोजन ग्रहण करने का दबाव डाला जा सकता है। अत: उनको अपने प्रयोजन से अवगत करा देना उचित होगा। अपने स्वास्थ्य के अनुसार ही उपवास की अवधि को निर्धारित करना चाहिए, दूसरों के अनुभव पर नहीं। आशावादी, उत्साहजनक वातावरण उपवास की सफलता के लिए बहुत जरूरी है। यदि आप दीर्घकाल तक उपवास करना चाहते हैं और यह घर में संभव न हो, तो आपको उतने समय के लिए आश्रमवास करना चाहिए, जहाँ उचित निर्देशन में आप अपना प्रयोजन सिद्ध कर सकते हैं। कई बार लोग उपवास आरम्भ करने के बाद घबरा जाते हैं। अत: उन्हें आश्रम के उचित वातावरण में सहायता मिलेगी।

शरीर स्वयं ही उपवास के लिए उचित अवधि का निर्धारण करने में समर्थ है। व्यक्ति चाहे उपचार के लिए उपवास करे या शरीर के शुद्धिकरण के लिए, प्रत्येक व्यक्ति को अपनी शरीर-रचना एवं कार्यशक्ति के अनुसार उपवास की अवधि निर्धारित करनी चाहिए। इसे आप स्वयं अपने लिए निर्धारित कर सकते हैं। उपवास की अवधि का निर्धारण प्रयोजन पर निर्भर रहता है। साधारण शरीर-शुद्धि की दृष्टि से महीने में एक-दो दिनों का उपवास पर्याप्त होगा। यदि सप्ताह में एक दिन उपवास का अभ्यास किया जाए तो यह स्वास्थ्य की दृष्टि से अति उत्तम है। यदि निर्देशक के बिना किसी विशेष योगोपचारार्थ उपवास किया जा रहा हो, तो तीन दिन से अधिक न किया जाए। तीन दिन का समय शरीर शुद्धि के लिए पर्याप्त होगा।

शुद्ध उपवास में केवल जल पीना चाहिए। उपवास के समय पर्याप्त मात्रा में जल पीने से शरीर की शुद्धि होती है। दो से अधिक दिन के उपवास में दिन में करीब तीन बार सादे पानी में नींबू निचोड़ कर लेना चाहिए।

एक दिन के उपवास में कमजोरी का अनुभव मानसिक होता है। उपवास के समय होने वाली अनुभूतियों का कारण आपका मन हो सकता है। देखा गया है कि दीर्घकालीन उपवास के बाद भी व्यक्ति सशक्त बना रहता है। कुछ लोगों

का मत है कि उपवास के समय केवल सोते रहने से इसके लाभों से आप वंचित रह जाएँगे, क्योंकि इससे रक्तपरिवहन में अवरोध उत्पन्न होगा। अन्य लोगों का मत है कि उपवास के समय पूर्ण विश्राम जरूरी है। कुछ लोगों का कहना है कि उपवास के साथ व्यक्ति दैनिक कार्यों को यथावत् जारी रख सकता है। इस समय व्यक्ति अधिक स्फूर्ति के साथ कार्य कर सकता है। आपको अपनी योग्यता एवं आवश्यकता के अनुसार अपने लिए कोई मध्यम मार्ग चुनना होगा।

दीर्घकालीन उपवास में आरम्भ के कुछ दिनों बाद भूख की अनुभूति प्राय: समाप्त हो जाती है, तथापि आमाशय का संकुचन चालू रहता है। ऐसा मस्तिष्क की अनुकूलन प्रक्रिया के कारण होता है। जल भूख मिटाने में मदद करता है, किन्तु बर्फ वाला पानी कभी न पीयें। भुजंगिनी मुद्रा भी भूख कम करने के लिए उपयोगी है। याद रखना चाहिए कि भूख और भूख की इच्छा में अन्तर होता है। भूख शरीर के कार्यों को सुचारु रखने के लिए प्राकृतिक आवश्यकता है और भूख की इच्छा केवल आपकी वासना है।

उपवास के पहले या दूसरे दिन एनिमा या बस्ति द्वारा पेट साफ कर लेना चाहिए, विशेषत: जब शौच साफ न हो। लघु शंखप्रक्षालन भी ठीक रहेगा, परन्तु किसी प्रकार की दस्त वाली गोलियाँ न लें।

उपवास के समय दिन में एक या दो बार गुनगुने या ठण्ढे जल से स्नान कर लेना चाहिए, ताकि आंतरिक व बाह्य सफाई साथ-साथ होती रहे।

मन को व्यस्त रखें और भोजन के बारे में न सोचें। उपवास करना और पूरे समय भोजन के विषय में या उपवास समाप्ति पर खाने के विषय में सोचना उपवास न करने के बराबर है। इससे केवल मानसिक तनाव उत्पन्न होंगे, लाभ कुछ नहीं होगा।

मोटापा कम करने के लिए उपवास की सलाह हम नहीं देते, क्योंकि अत्यधिक खाने का आदी होने के कारण व्यक्ति यदि एक दिन उपवास कर भी लेगा, तो दूसरे दिन दुगुना खाकर सारी कसर निकाल लेगा, जो स्वास्थ्य की दृष्टि से उचित नहीं है।

उपवास को आध्यात्मिक साधना के रूप में करें। उपवास को प्रदर्शन का रूप न दें। शारीरिक लाभ के साथ ही आत्मशक्ति एवं आत्मानुशासन बढ़ाने के लिए उपवास बहुत उपयोगी है।

उपवास करने वालों को याद रखना चाहिए कि उपवास एक प्रकार के संयम का अभ्यास है। यदि आप संयम नहीं रख सकते तो उपवास न करें,

क्योंकि असंयत होने से दुगुनी हानि होने की संभावना रहती है। जब आप इसकी आवश्यकता समझें, तभी उपवास करें। भगवद्गीता में कहा गया है –

नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नत: ।
न चाति स्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन ॥6.16॥

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं, 'हे अर्जुन, यह योग न तो बहुत खाने वाले का सिद्ध होता है, न ही बिल्कुल न खाने वाले का; न अति शयन करने वाले का और न अत्यन्त जागने वाले का ही सिद्ध होता है।'

उपवास कैसे तोड़ें

उपवास की अवधि समाप्त होते ही लोग प्रायः भरपूर आहार लेने लग जाते हैं, लेकिन उस समय बहुत सावधानी बरतने की आवश्यकता होती है। उपवास यदि उचित रीति से न तोड़ा जाए तो उससे पूरा लाभ नहीं उठाया जा सकता। उपवास के बाद आरम्भ में तरल पदार्थों का सेवन करना चाहिए। फलों का रस, दूध, नींबू या संतरे का रस हर दो घण्टे बाद लेना चाहिए। तरल पदार्थों के बाद ये आहार लिए जा सकते हैं –

फलाहार – मौसमी फलों की छोटी-छोटी फाँकें करके थोड़ी-थोड़ी मात्रा में हर दो या तीन घण्टे बाद लें।

दुग्धाहार – हर दो-तीन घण्टे बाद एक गिलास गर्म दूध लिया जा सकता है।

काँजी – वायु विकार या डूयूडेनल अल्सर वालों के लिए सर्वोत्तम है। जौ का उबाला पानी आरम्भ में एक गिलास प्रति घण्टा, फिर बाद में थोड़ा नमक वाला और गाढ़ा बनाकर लिया जाए।

प्रथम ठोस आहार पतली खिचड़ी के रूप में ले सकते हैं। उपवास तोड़ने के बाद अधिक से अधिक जल का प्रयोग करें, अत्यधिक आहार न करें और अत्यधिक शारीरिक मेहनत न करें।

अल्पाहार

कई लोगों को दीर्घकालीन उपवास कठिन मालूम पड़ेगा। उनको आरम्भ में अल्पकालीन उपवास करना चाहिए। स्वास्थ्य के लिए भी ऐसे उपवास उपयोगी हैं। ऐसे उपवास को पथ्य भी कह सकते हैं, जिनमें कुछ विशेष भोज्य पदार्थों का त्याग किया जाता है। कुछ लोग मात्र फलाहार लेते हैं और अन्न

त्याग देते हैं। इससे पेट की सफाई हो जाती है। फलाहार के लिए सुझाव इस प्रकार हैं –

- कुछ घण्टों के अन्तराल में एक-एक सन्तरा प्रतिदिन छ: से आठ बार।
- एक पपीता हर तीन या चार घण्टे में।
- दिन में छ: बार तीन घण्टे के अंतराल से ताजे फलों का रस।
- हर चार-छ: घण्टे में एक बार किसी प्रकार की भाजी का सूप।

बच्चों के लिए उपवास

उपवास कब करना चाहिए, इसका ज्ञान बच्चों को स्वाभाविक रूप से हो जाता है। जब बच्चे बीमारी की हालत में भोजन न लेने की इच्छा दर्शाते हैं, तो उन्हें जबरदस्ती नहीं खिलाना चाहिए। इस अवस्था में उनका उपवास लाभप्रद है। बच्चे को जब जरूरत होगी, वह स्वयं खाने की इच्छा प्रकट करेगा। तब उसे हल्की खिचड़ी या फलों का रस आदि दिया जा सकता है।

उपवास काल में योग साधना

उपवास के समय योगाभ्यास शरीर से विषाक्त पदार्थों के निष्कासन में सहयोग देने के लिए किया जाना चाहिए। विशेषकर योग की ये क्रियायें लाभप्रद हैं –

हठयोग	लघु शंखप्रक्षालन, कुंजल, नेति और बस्ति
आसन	पवनमुक्तासन, वज्रासन, शवासन
प्राणायाम	भ्रामरी, नाड़ी शोधन, उज्जायी
ध्यान	योगनिद्रा, अन्तर्मौन, अजपाजप

सुख और दु:ख

सुख और दु:ख की परिभाषा क्या है? तुम्हें दाल-रोटी सबेरे-शाम मिल रही है, तुम मस्त हो, तुम्हारी बीबी है, गाय को देख लेती है, सफाई वगैरह कर लेती है, तुम्हारा बेटा है, स्कूल में पढ़ता है, दो-चार साल के बाद शादी करेगा, काम पर लग जाएगा। एक तो यह परिस्थिति है। दूसरी परिस्थिति यह कि घर में बहुत पैसा है, ट्रक भी चलता है, नौकर-चाकर भी हैं, लेकिन बीबी पटना में पड़ी है, उसको निमोनिया है, लड़का रोज शाम को पीकर आता है, अपनी बीबी को मारता है। किस परिस्थिति में सुख है और किसमें दु:ख?

जब मन चिन्तारहित हो, वह सुख है और जब मन चिन्ताग्रस्त हो, तब दु:ख है। भले ही अच्छे कपड़े पहनो और अच्छा खाना खाओ, यह सुख नहीं, यह तो भोग है। सुख और भोग में बहुत अन्तर होता है। बढ़िया कपड़ा पहनना और सुन्दर ढंग से बाल कटवाकर तेल-फुलेल लगाना, यह भोग है, सुख नहीं। सुख मन की एक स्थिति का नाम है और दु:ख भी एक स्थिति का ही नाम है। इसका रुपये, बीबी, बच्चे, जन्म या मरण से कोई सम्बन्ध नहीं। नहीं तो सबसे दु:खी तो हम साधु लोग हुए, क्योंकि हमारी न बीबी है न बच्चा, न घर है न ही पैसा!

चाह गयी चिन्ता मिटी मनुवा बेपरवाह ।
जिसको कछु न चाहिए वो ही शाहंशाह ॥

सुख-दु:ख यह होता है। इसलिए यह कहना कि आजकल के जमाने में अच्छे लोग दु:खी हैं और बदमाश लोग सुखी, सही नहीं है। जितने भी बदमाश लोग हैं, कुछ देर बदमाशी करते हैं, लेकिन बाद में उनको भी जमकर चोट लगती है। अमरीका, जर्मनी या फ्राँस जैसे देश, जहाँ पैसा बहुत है, वहाँ लोग कितने दु:खी हैं! दुनिया में सबसे अच्छी जनकल्याणकारी सरकार स्वीडन की है। लेकिन दुनिया में सबसे ज्यादा आत्महत्या की दर भी वहीं है! वहाँ कोई बेरोजगारी नहीं। अगर कोई कुँवारी लड़की गर्भवती हो गयी तो वह सरकार के पास जाएगी, अपना नाम लिखाएगी, उसका भत्ता निश्चित हो जाएगा। कोई यह नहीं कहेगा कि तुम्हारे बाप की नाक कट जाएगी, तुम गर्भपात कराओ। जिस कम्पनी में वह काम करती है, वहाँ नोटिस चला जाएगा कि वह गर्भवती है,

सम्बन्धित नियमों का पालन किया जाए। बच्चा होने पर बीस-पचीस हजार नकद उसको दे दिया जाता है। जब बच्चा होता है, फॉर्म में सिर्फ माँ का नाम रहता है, बाप का नाम पूछते ही नहीं हैं।

कहने का मतलब यह कि जिस देश में इतनी कल्याणकारी सरकार हो, जहाँ कुँवारी लड़की को माँ बनने पर आत्महत्या करने की आवश्यकता नहीं, जहाँ बेकानून लड़का भी जीवित रह सकता है, इतना सुन्दर सरकार का इन्तजाम है, फिर वहाँ इतनी आत्महत्या क्यों? इसलिए कि जिन लोगों के पास पैसा काफी है, जिनको नौकरी, घर, बीबी-बच्चों की चिन्ता नहीं, ऐसे लोगों का मन खिन्न हो जाता है, विषादमय हो जाता है। वे सोचते हैं, ऐसे जीने से तो मरना अच्छा है। जबकि गरीब, अभावग्रस्त लोग तो संघर्ष में व्यस्त रहते हैं। इसलिए यह बात कहना गलत है कि किसी के पास सब कुछ हो तभी वह सुखी है। सुख-दु:ख मन की अवस्था है।

एक दृष्टि से देखा जाए तो अगर जनसाधारण की चिन्ता बन्द हो जाए, बहुत लोग आत्महत्या करने लग जायेंगे या दूसरे गलत काम करने लगेंगे। चिन्ता के कारण तुम्हारा मन एक जंगली शेर या साँप की तरह इधर-उधर भाग नहीं सकता। कहीं बीबी की बीमारी मन को पकड़े हुई है, तो कहीं घर

की गरीबी या बेटी की शादी या कचहरी का मुकदमा पकड़े हुए हैं। मन तो हर वक्त व्यस्त है। जब मन व्यस्त होता है, बन्धा हुआ रहता है, वह सब से अच्छी स्थिति है। नहीं तो खाली दिमाग शैतान का घर!

इसलिए हिन्दुस्तान जैसे गरीब देशों में अपराध, आत्महत्याएँ और पागलपन कम होते हैं। यह विद्वानों की मान्यता है। मालदार देशों में एक दिन में जितनी चोरियाँ-डकैतियाँ और खून होते हैं, उतने भारत में सालभर में नहीं होते। हमारे देश में लोग गरीब हैं, अन्धे-लूले-लंगड़े हैं, मगर उतना अपराध नहीं है जितना वहाँ।

इस दृष्टि से गरीबी वरदान है और अमीरी अभिशाप। ईमानदारी से बोल रहा हूँ, कोई बुरा न माने। पैसा अपने साथ दुर्गुण लेकर आता है। लेकिन जो आदमी गरीब है, उसे थोड़ा आध्यात्मिक ढंग से रहना चाहिए, उसके सोचने का ढंग ऊँचा होना चाहिए। उसकी जेब भले ही हल्की हो, उसका बैंक-बैलेन्स भले ही कम हो, लेकिन उसकी विचारधारा और रहन-सहन का तरीका अच्छा हो। साधु-महात्मा तो सदा से ऐसे ही रहते आए हैं। आखिर भगवान बुद्ध, जिनको आज सारी दुनिया मानती है, कैसे रहते थे? रोज दस बजे सबेरे अपना चीवर और पात्र लेकर निकलते थे भिक्षा के लिए। अस्सी साल की अवस्था तक वे भिक्षा माँगते थे। दस बजे का उनका समय था, एक बार खाते थे, उसके बाद पात्र साफ करके रख देते थे। इसके अलावा दिन में कोई चाय-नाश्ता नहीं।

वे राजपुत्र थे, शाक्य वंश के राजा शुद्धोधन के इकलौते बेटे। जब वे पैदा हुए, उस समय कमल के फूल अपने आप खिलने लगे! राजज्योतिषी ने राजा शुद्धोधन से कहा था कि यह लड़का बहुत बड़ा महात्मा होगा। राजा शुद्धोधन घबरा गये। सोचा बुढ़ापे में तो बेटा मिला और वह भी साधु हो जाएगा। उन्होंने उसे सदा महलों में ही रखा, बाहर भेजा ही नहीं। राजकुमार भोग-विलास के साथ आराम से रहता था, जैसे बड़े घरों में बच्चे रहते हैं। जब दूसरों से मिलेगा ही नहीं तो साधु कैसे बनेगा?

एक दिन वे किसी के साथ घूमने जा रहा थे, तो रास्ते में उन्होंने एक बुढ़िया को देखा, फिर एक मुर्दे को देखा। अपने साथी से पूछा कि यह क्या है। उसने कहा, सभी एक-न-एक दिन ऐसे हो जाते हैं। तब जाकर उनके अन्दर का साधु जगा और छत्तीस साल की अवस्था में उन्होंने संन्यास ले लिया। बाद में जब वे बहुत मशहूर हो गये, तब उनके पिता ने उन्हें कपिलवस्तु में आमंत्रित किया। वे वहाँ गये और रहे भी, लेकिन दस बजे वे अपने नियमानुसार भिक्षा के लिए

निकल गये। उनके पिताजी ने पूछा, 'कहाँ जा रहे हो?' उन्होंने कहा, 'भिक्षा माँगने जा रहा हूँ।' पिता ने कहा, 'तुम शाक्य वंश के क्षत्रिय हो, राजपुत्र हो, भिक्षा कैसे माँगोगे?' तब बुद्ध ने कहा, 'नहीं, मैं शाक्य वंश का नहीं, मैं बुद्ध वंश का हूँ। मेरा काम है भिक्षा माँगना।'

भगवान बुद्ध इतने प्रसिद्ध हो चुके थे, अजातशत्रु जैसे शक्तिशाली राजा उनके चरणों में शीश झुकाते थे। मुंगेर जिले का जो राजा प्रसीद था, वह भी उनके चरणों में झुकता था। इसके बावजूद भी वे भिक्षा क्यों माँगते थे? किसी से भी कह देते, लोग खुशी-खुशी भोजन ला देते। लेकिन उन्होंने कहा नहीं। उन्होंने सुख का रास्ता नहीं छोड़ा। सुख का रास्ता है सरलता। अगर कल तुम्हारे पास बीस-पचीस लाख रुपये आ जाएँ, तुम ऐसे थोड़े ही रहोगे। तुम बढ़िया कपड़े, बढ़िया गाड़ी, बढ़िया घर चाहोगे। सम्पत्ति आदमी को बदल देती है, विद्या भी आदमी को बदल देती है। मगर जो आदमी अध्यात्म में रहता है, वह जस का तस रहता है। भगवान बुद्ध जस के तस रहे। अस्सी साल की अवस्था में भी वे भिक्षा लेने जाते थे।

सुख मन की अवस्था है। उसका तुम्हारे रुपये-पैसे, घर-परिवार, बीबी-बच्चे, गाय-घोड़े से कोई मतलब नहीं है। जो सुखी है, वह फिर सुखी ही है और जो दु:खी है, उसे कितना भी पैसा दे दो, कितना भी बड़ा घर दे दो, कितनी प्रतिष्ठा दे दो, वह दु:खी ही रहेगा। और दु:ख क्या है? एक प्रकार की शिकायत है। यह नहीं हो रहा है, वह नहीं हो रहा है। दु:ख एक अतृप्ति है।

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

जागो माँ कुल-कुण्डलिनी

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

पृष्ठ 154, ISBN: 978-81-85787-58-9

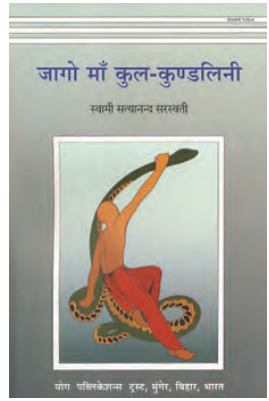

यह पुस्तक स्वामी सत्यानन्द सरस्वती द्वारा 1956–62 की अवधि में अपने एक अन्तरंग शिष्य को लिखे गये पत्रों का संकलन है। इस पुस्तक द्वारा स्वामी सत्यानन्द सरस्वती सबको गुरु-शिष्य सम्बन्ध के विकास की दुर्लभ झलक तथा चेतना की जागृति हेतु क्रमिक साधना उपलब्ध कराते हुए अपनी आध्यात्मिक सलाह तथा प्रोत्साहन एवं ब्रह्माण्डीय परिप्रेक्ष्य में मानव अस्तित्व की गहनतर समझ हेतु मार्गदर्शन प्रदान करते हैं।

उपलब्ध

पुस्तकों की मूल्य सूची एवं क्रयादेश प्रपत्र प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें –
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु, पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201
दूरभाष : 91–6344–222430, 9162783904

जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, अन्यथा आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा

वेबसाइट और एप्प

BIHAR YOGA

www.biharyoga.net
बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट पर बिहार योग, बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान संबंधी जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

सत्यम् योग प्रसाद
बिहार योग परम्परा की समस्त प्रकाशित कृतियाँ *satyamyogaprasad.net* वेबसाइट पर तथा *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में प्रस्तुत हैं।

यौगिक जीवनशैली साधना
biharyoga.net तथा *satyamyogaprasad.net* पर स्वस्थ जीवन हेतु यौगिक जीवनशैली साधना उपलब्ध है।

योगा एवं योगविद्या ऑनलाइन
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yoga-magazines/
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yogavidya/

योगा एवं योगविद्या पत्रिकाएँ *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में भी उपलब्ध हैं।

अन्य एप्प (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)
- योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की लोकप्रिय पुस्तक, ए.पी.एम.बी. अब सुविधाजनक एप्प के रूप में उपलब्ध है
- *Bihar Yoga* एप्प साधकों के लिए प्राचीन और नवीन यौगिक ज्ञान आधुनिक ढंग से पहुँचाता है
- *For Frontline Heroes* एप्प कोरोनावायरस के विरुद्ध अभियान में संघर्षरत कार्यकर्ताओं के लिए सरल योग अभ्यास प्रस्तुत करता है जो महामारी से उत्पन्न तनाव को सम्हालने में सहायक हैं

- Registered with the Department of Post, India
  Under No. MGR-01/2020-23
  Office of posting: Ganga Darshan TSO
  Date of posting: 1st-7th of every month
- Registered with the Registrar of Newspapers, India
  Under No. BIHHIN/2002/6306

issn 0972-5725

सभी ग्राहकों के लिए महत्त्वपूर्ण सूचना

आत्मस्वरूप

हरि: ॐ

हमें यह सुखद समाचार देते हुए हर्ष हो रहा है कि जनवरी 2021 से मासिक योगा (अंग्रेज़ी) तथा योगविद्या (हिन्दी) पत्रिकाएँ सभी ग्राहकों, सहयोगियों, योगप्रेमियों, भक्तों तथा आध्यात्मिक साधकों के लिए निम्नांकित वेबसाइटों पर नि:शुल्क उपलब्ध रहेंगी –

www.satyamyogaprasad.net

www.biharyoga.net

वर्तमान कोरोनावायरस महामारी और उससे उत्पन्न अनिश्चितता के कारण योगा और योगविद्या की प्रकाशित प्रतियाँ 2021 में ग्राहकों के लिए उपलब्ध नहीं रहेंगी। इसलिए 2021 में इन पत्रिकाओं के लिए नए सदस्यता आवेदन या पुरानी सदस्यता को बढ़ाने के आवेदन स्वीकार **नहीं** किए जा रहे हैं। अत: इन पत्रिकाओं के लिए सदस्यता आवेदन **मत** भेजिए।

पत्रिकाओं सम्बन्धी परिस्थिति की जानकारी आपको समय-समय पर मिलती रहेगी।

इस बीच श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती और श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती की शिक्षाओं को ग्रहण कर उन्हें अपनी दिनचर्या में आत्मसात् एवं अभिव्यक्त कीजिये ताकि आपका जीवन उदात्त और उन्नत बन सके।

आपके स्वास्थ्य, कल्याण और शांति के लिए श्री स्वामी सत्यानन्द जी के आशीर्वाद सहित,

ॐ तत्सत्

सम्पादक